वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 427
ISBN-978-93-84003-18-0

जिनसहस्रनाम स्तोत्र

–रचयित्री –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य चारित्रचन्द्रिका, दिव्यशक्ति, युगप्रवर्तिका,
गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के 59वें आर्यिका दीक्षा दिवस
वैशाख कृ. दूज (17 अप्रैल 2014) के उपलक्ष्य में प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	वैशाख कृ. दूज, 17 अप्रैल 2014	32/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

ज्ञान समान न आन जगत में सुख को कारण।
इह परमामृत जन्म जरा मृत रोग निवारण।।

सदैव ज्ञानरूपी अमृत का पान कराने वाली गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की लेखनी से निरन्तर ज्ञानरूपी अमृत की वर्षा हो रही है और हम सभी उससे अभिसिंचित होकर अपने ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम करके असंख्य कर्मों की निर्जरा कर रहे हैं।

जिनेन्द्र भगवान की स्तुति, भक्ति कर्मनिर्जरा में विशेष कारण है। भक्त भगवान की भक्ति करते–करते एक दिन स्वयं भगवान बन जाता है पूज्य माताजी हमेशा अपने प्रवचनों में कहती हैं प्रत्येक प्राणी की आत्मा भगवान आत्मा है। जैसे दूध में घी शक्ति रूप में विद्यमान है। वैसे ही प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज के प्रथम पट्टशिष्य चारित्र चूड़ामणि आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के कर-कमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्त करने वाली, वर्तमान में सभी पीछीधारी साधुओं में सबसे प्राचीन, गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने साहित्य क्षेत्र में एक कीर्तिमान स्थापित किया है। इनकी लेखनी से लिखा गया एक–एक शब्द मोती की माला के समान है।

श्री जिनसेनाचार्य रचित ''जिनसहस्रनाम'' स्तोत्र के संस्कृत श्लोकों का पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने टीका ग्रंथ के आधार से अर्थ करके हिन्दी पद्यों में सुन्दर रचना कर दी है जिसके प्रत्येक श्लोक का अर्थ स्पष्ट झलकता है। जिसे आप इस 'जिनसहस्रनाम स्तोत्र' में पढ़ेंगे। यह पुस्तक वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला द्वारा प्रकाशित करके आप सभी पाठकों तक पहूँचाया जा रहा है। यह स्तोत्र सभी के इच्छित मनोरथों को सफल करें यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें और वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, जिनेन्द्रदेव से यही मंगल प्रार्थना है।

प्रस्तावना

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

देव, शास्त्र, गुरु की भक्ति में लिखा गया एक–एक शब्द असंख्य कर्मों की निर्जरा में कारण है। जिनके हृदय में, रोम–रोम में भगवान के प्रति भक्ति भरी हुई है, जिनका एक–एक क्षण जिनवाणी की सेवा में लगा हुआ है तथा जिनधर्म की प्रभावना करते हुए जिनकी लेखनी आगम से हटकर कभी नहीं चलती, ऐसी साक्षात् सरस्वती स्वरूपा, दिव्यशक्ति, नारियों की मसीहा, चारित्र चन्द्रिका, युगप्रवर्तिका, आर्यिका शिरोमणि परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की लेखनी से अब तक 300 से अधिक ग्रंथ प्रसूत हो चुके हैं।

सर्वप्रथम पूज्य माताजी ने भगवान के 1008 नामों में विभक्ति लगाकर सहस्रनाम मंत्र लिखे। पूज्य माताजी ने कातन्त्र व्याकरण जिसे **'लोहे के चने चबाना'** कहा जाता है ऐसे व्याकरण को मात्र ढाई महीने में पढ़कर कण्ठस्थ कर लिया और फिर व्याकरण के ज्ञान के आधार पर सहस्रनाम मंत्र एवं अनेक संस्कृत में स्तोत्र एवं संस्कृत में टीकाग्रंथ लिखे। संस्कृत में एकाक्षरी से लेकर अनेकाक्षरी तक अनेक छंदों में लगभग सभी छन्दों को लेकर 24 तीर्थंकरों की भक्ति में **'कल्याण कल्पतरू स्तोत्र'** की रचना की। इसमें स्तोत्र के साथ छंद के लक्षण भी दिए हैं। जिससे छन्द का ज्ञान भी हो जाता है।

तीर्थंकर भगवान तो असंख्य नाम और गुणों को धारण करने वाले हैं फिर भी जिनसहस्रनाम स्तोत्र में श्री जिनसेनाचार्य ने भगवान के 1008 नामों को लेकर संस्कृत में रचना की। इसकी टीका ग्रंथ का आधार लेकर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने काव्य में 1008 पद्यों की रचना की। इस स्तोत्र के प्रारम्भ में पूज्य माताजी ने लिखा है–

एक हजार सु आठ ये, श्रीजिन नाम महान।
उनका मैं वन्दन करूँ, कर कर के गुणगान।।
नाम असंख्यों धारते, गुण अनंत भंडार।
नमूँ नमूँ नित भक्ति से, स्वात्म सौख्य कर्तार।।

जिस समय भगवान की प्रथम दिव्यध्वनि खिरती है उस समय सौधर्म इन्द्र अति भक्ति से आकर विक्रिया से 1008 नेत्र बनाकर प्रभु को देखता है और एक हजार लक्षण को धारण करने वाले सभी भाषाओं के स्वामी तीर्थंकर भगवान की एक हजार आठ नामों से स्तुति करता हुआ एक भव को धारण कर मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

इस स्तोत्र में पूज्य माताजी ने भगवान के एक-एक नाम को लेकर उसके अर्थ का विश्लेषण करते हुए एक-एक काव्य रचना की है। जैसे प्रथम काव्य में लिखा-

'श्रीमान्' आप अंतर अनंत सुख, ज्ञान वीर्य दर्शन श्रीपति।
बहिरंग समवसरणादि महा-वैभव प्रतिहार्यमयी श्रीपति।।
इन अन्तरंग बहिरंग श्री के, स्वामी प्रभु श्रीमान बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।

अर्थात् 'श्रीमान' नाम के धारक तीर्थंकर भगवान आप अन्तरंग अनन्त ज्ञान, सुख, वीर्य और दर्शन के स्वामी हो और बहिरंग समवसरणादि महावैभव, प्रातिहार्य के स्वामी हो, इन अंतरंग और बहिरंग लक्ष्मी के स्वामी आप 'श्रीमान' हो। मैं आपके नामावलि को वन्दन करता हूँ, मेरे सभी इच्छित कार्य पूर्ण हों।

काव्य का एक-एक शब्द अर्थ को स्पष्ट दर्पण के समान झलका रहा है। एक शतक काव्य लिखने के बाद एक सौ नाम को एक साथ लेकर पूज्य माताजी ने यह भावना भाई है कि हे प्रभु आपके नाम मंत्र को जपते हुए मैं भी एक 'सिद्ध' नाम को प्राप्त कर लूं और हे प्रभु! आप सम शुद्ध अवस्था को प्राप्त कर पुनः पुनः संसार में न आऊँ।

इसी तरह से भगवान के 1008 नामों का पद्य में विश्लेषण करते हुए सुन्दर अर्थ, शब्द सौष्ठव, विविध छन्दों एवं धारावाहिक लय के साथ लिखते हुए पूज्य माताजी ने जिनसहस्रनाम स्तोत्र की काव्य रचना के बाद 'जिनसहस्रनाम स्तोत्र महिमा' में लिखा है-

जय जय जिनेन्द्र! तुम असंख्य नाम गुण भरें।
जय जय जिनेन्द्र! तुम अनंत सौख्य गुण भरें।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़े।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़े।।

अर्थात् हे भगवन् ! आपमें असंख्य नाम एवं गुण भरे हैं आपकी जय हो। हे नाथ! आपके सहस्रनाम को जो प्रतिदिन पढ़ते हैं वे पवित्र बुद्धि वाले एक दिन मोक्ष महल में चढ़ जाते हैं।

यह स्तोत्र स्मरण शक्ति की वृद्धि करने वाला है इसे पढ़कर भव्य जीव अपने ज्ञान को परिपक्व कर एक दिन श्रुतज्ञान को और फिर केवलज्ञान को प्राप्त कर सकते हैं। यह जिनसहस्रनाम स्तोत्र सभी के लिए ज्ञान, चारित्र की वृद्धि में वरदान बने, यही मंगल भावना है।

दो शब्द

-आर्यिका सुदृढ़मती

दिगम्बर जैन परम्परा में प्रतिदिन स्तोत्र पाठ पढ़ने की प्राचीन परम्परा है। प्रायः अधिकतम श्रावक-श्राविकाएँ भक्तामर, सहस्रनाम, कल्याणमंदिर आदि स्तोत्रों का पाठ करते हैं, सुनते हैं। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने अनेक पूजा-विधानों की रचना करके भक्तों के लिये जहाँ प्रभु की भक्ति करने का सुन्दर माध्यम प्रदान किया है, वहीं पूज्य माताजी ने संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत आदि भाषाओं में अनेक स्तोत्र पाठों की भी रचना की हैं। पूज्य माताजी की प्रारंभ से ही देव-शास्त्र-गुरु के प्रति अनन्य भक्ति रही है, तभी सन् 1955 में जब आपने सर्वप्रथम अपनी लेखनी चलाई तो भगवान के 1008 नामों के मंत्रों की रचना की, जिसके पश्चात् सतत आपकी लेखनी चल रही है और 300 से अधिक ग्रंथ हम सबके ज्ञानवर्धन हेतु प्रसूत हो चुके हैं। सहस्रनाममंत्र स्तोत्र पाठ पर आपकी गृहस्थ अवस्था से ही श्रद्धा रही है अतः उन्हीं मंत्रों से आपने अपना लेखन कार्य शुरू किया। सहस्रनाम विधान की भी आपने रचना की। जिन लोगों को संस्कृत सहस्रनाम पाठ पढ़ने में कठिनाई होती है, शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते हैं उनकी सुविधा के लिये पूज्य माताजी ने हिन्दी में "जिन सहस्रनाम स्तोत्र" की रचना कर दी है। जिसको पढ़ के प्रत्येक जनसामान्य उसके अर्थ को भी हृदयंगम करके अपूर्व पुण्य का संचय कर लेंगे। इस सहस्रनाम स्तोत्र में भगवान के 1008 नामों को माला के एक-एक मोती के रूप में एक-एक नाम को पिरो दिया है। एक-एक पद्य में उस नाम के सार्थक अर्थ को पूज्य माताजी ने गागर में सागर की तरह भर दिया है। इस स्तोत्र का भक्तिपूर्वक पाठ करने से, सुनने से असंख्य कर्मों की निर्जरा होती है। भगवान के नामों का मात्र उच्चारण करने से स्मरण शक्ति एवं ज्ञान की अतिशय अभिवृद्धि होती है तथा यह परंपरा से अगले भव में भी पूर्ण श्रुतज्ञान को प्राप्त कराने में निमित्त कारण है। आचार्य श्री कुंदकुंद स्वामी ने भी मूलाचार ग्रंथ में कहा है-

भत्तीए जिणवराणं, खीयदि जं पुव्वसंचियं कम्मं।
आयरिय पसाएण य, विज्जा मंता य सिज्झंति।।13।।

जिनेन्द्र देव की भक्ति, स्तुति, वन्दना से पूर्वभवों में संचित अनंत पाप नष्ट हो जाते हैं और आचार्यों के, गुरुओं की कृपा प्रसाद से विद्या, मंत्र आदि तो सिद्ध हो ही जाते हैं, परंपरा से मुक्ति की प्राप्ति भी हो जाती है।

इस "जिनसहस्रनाम स्तोत्र" का पाठ करके हम सब भी एक दिन मुक्ति लक्ष्मी को प्राप्त करें, इसी मंगल भावना के साथ पूज्य माताजी के चरणों में बारंबार वंदामि करते हैं।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

–जीवन प्रकाश जैन (प्रबंध सम्पादक)

ईसवी सन् १९७२ में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से स्थापित उक्त संस्था के द्वारा जम्बूद्वीप रचना के निर्माण हेतु मेरठ (उ.प्र.) के ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में नशिया मार्ग पर जुलाई १९७४ में एक भूमि क्रय की गई, जहाँ सर्वप्रथम २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण सात हाथ (सवा दस फुट) ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान करने हेतु फरवरी १९७५ में एक लघुकाय जिनालय का निर्माण किया गया, जो सन् १९९० में एक अनोखे 'कमल मंदिर' के रूप में निर्मित हुआ है। यहाँ विराजमान कल्पवृक्ष भगवान महावीर से यह अतिशय क्षेत्र निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर होता हुआ नित्य नये निर्माणों के द्वारा संसार में अद्वितीय पर्यटन स्थल के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। इस प्रतिमा के दर्शन करके भक्तगण अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं।

जम्बूद्वीप निर्माण का प्रथम चरण—जुलाई सन् १९७४ में रखी गई नींव के आधार पर जम्बूद्वीप के बीचोंबीच में सर्वप्रथम आगम वर्णित सुमेरुपर्वत (१०१ फुट ऊँचा) का निर्माण अप्रैल सन् १९७९ में एवं सन् १९८५ में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण पूर्ण हुआ। सोलह जिनमंदिरों से समन्वित उस सुमेरुपर्वत के अंदर से निर्मित १३६ सीढ़ियों से चढ़कर श्रद्धालु भक्त समस्त भगवन्तों के दर्शन करके जब सबसे ऊपर पाण्डुकशिला के निकट पहुँचते हैं, तो नीचे जम्बूद्वीप रचना के सभी नदी, पर्वत, मंदिर, उपवन आदि दृश्यों के साथ-साथ हस्तिनापुर के आसपास के सुदूरवर्ती ग्रामों का भी प्राकृतिक सौंदर्य देखकर फूले नहीं समाते हैं।

यात्री सुविधा—हस्तिनापुर तीर्थ में जम्बूद्वीप स्थल के पूरे परिसर में संस्थान द्वारा कार्यालय का सक्रिय संचालन किया जाता है। वहाँ यात्रियों के ठहरने हेतु आधुनिक सुविधायुक्त २०० कमरे, ५० से अधिक डीलक्स फ्लैट एवं अनेकों गेस्ट हाउस (बंगले) बने हुए हैं। इसके साथ ही यहाँ सुन्दर भोजनालय है जहाँ यात्रियों को सुविधापूर्वक शुद्ध भोजन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त २ किमी. दूर हस्तिनापुर सेन्ट्रल टाउन में सरकारी अस्पताल, डाकखाना, बाजार, इंटरकालेज तथा अन्य शिक्षण संस्थाएँ आदि सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

हस्तिनापुर कैसे पहुँचे ?—भारत की राजधानी दिल्ली से ११० किमी. पश्चिमी उत्तरप्रदेश में जिला-मेरठ से ४० किमी. दूर हस्तिनापुर तीर्थ है। राजधानी दिल्ली से हस्तिनापुर के लिए अंतर्राज्यीय बस अड्डे अथवा आनंद विहार बस अड्डे से उत्तरप्रदेश रोडवेज तथा डी.टी.सी. बसों की निरंतर सेवा उपलब्ध है। मेरठ से भी प्रति आधे घंटे के अंतराल से जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर पहुँचने हेतु रोडवेज की बसें सुलभता के साथ उपलब्ध रहती हैं। 'जम्बूद्वीप' के नाम से ये बसें चलती हैं जो सीधे जम्बूद्वीप के सामने ही रुकती हैं और जम्बूद्वीप से ही मेरठ, दिल्ली, तिजारा आदि यात्रा हेतु बसें उपलब्ध रहती हैं। दिल्ली और मेरठ के बीच रेल सेवा भी है। देश-विदेश के यात्रीगण हस्तिनापुर पधारकर इस धरती का स्वर्ग मानी जाने वाली 'जम्बूद्वीप रचना' के दर्शन करें और मानसिक शांति का अनुभव करते हुए मनवांछित फल प्राप्त करें, यही मंगलकामना है।

जिन सहस्रनाम स्तोत्र

(गणिनी ज्ञानमती कृत-पद्यानुवाद)

-शंभु छंद-

जिनवर की प्रथम दिव्य देशना, नंतर सुरपति अति भक्ती से।
निज विकसित नेत्र हजार बना, प्रभु को अवलोके विक्रिय से।।
प्रभु एक हजार आठ लक्षण-धारी सब भाषा के स्वामी।
शुभ एक हजार आठ नामों, से स्तुति करता वह शिवगामी।।1।।

-दोहा-

एक हजार सु आठ ये, श्रीजिननाम महान्।
उनका मैं वंदन करूँ, कर कर के गुणगान।।2।।
नाम असंख्यों धारते, गुण अनंत भंडार।
नमूं नमूं नित भक्ति से, स्वात्म सौख्य कर्तार।।3।।

(1)

-शंभु छंद-

'श्रीमान्' आप अंतर अनंत सुख, ज्ञान वीर्य दर्शन श्रीपति।
बहिरंग समवसरणादि महा-वैभव प्रातिहार्यमयी श्रीपति।।
इन अन्तरंग बहिरंग श्री के, स्वामी प्रभु श्रीमान् बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।1।।

प्रभु आप 'स्वयंभू' स्वयं हुये, निज में निज ज्ञान प्रगट करके।
नहिं गुरु की तनिक अपेक्षा थी, निज को गुरु स्वयं बना करके।।
निज द्वारा निज को निज में ध्या, स्वयमेव स्वयंभू आप बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।2।।

प्रभु 'वृषभ' धर्मघन मेघ सतत् दिव्यध्वनि वर्षा करते हैं।
'वृष' धर्म अहिंसा लक्षण से 'भा' शोभित होते रहते हैं।।
अथवा भक्तों के लिये सदा इच्छित वर्षाकर वृषभ बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।3।।

'शंभव' शं-सुख भव-हो तुमसे इससे शंभव कहलाते हो।
अथवा 'संभव' सं-समीचीन भव-जन्म धरा मुस्काते हो।।
हे संभव शांतिमूर्ति प्रभु तुम वंदन करते हम शांत बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।4।।

'शम्भू' शं-परमानंदरूप सुख देने वाले आप प्रभो।
इंद्रिय विषयों से रहित अतींद्रिय सौख्य सुधारस लीन विभो।।
परमानंदामृत पीने की शक्ती दीजे हे नाथ! हमें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।5।।

आत्मा से हुये 'आत्मभू' हैं, आत्मा शुध बुद्ध स्वभावी है।
चिच्चमत्कार लक्षण परमैक, ब्रह्ममय सौख्य स्वभावी है।।
टंकोत्कीर्ण स्फटिकमणी, आत्मा भू-धरा पाइ तुमने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।6।।

हे नाथ 'स्वयंप्रभ' आप स्वयं, प्रकृष्ट शोभते रहते हैं।
निज प्रभा-कांति से त्रिभुवन को भी, आप प्रकाशित करते हैं।।
मेरी निज आत्मप्रभा मुझको, मिल जावे गुणमणि तेज घने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।7।।

हे नाथ! आप 'प्रभु' हो सबके, स्वामी होने से इस जग में।
परिपूर्ण समर्थ नाथ तुमही, भक्तों के मनरथ भरने में।।
मैं स्वयं समर्थ बनूँ निज को, पाने से सब पुरुषार्थ बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।8।।

'भोक्ता' प्रभु आप सदा परमानंद–सुख के अनुभव कर्ता हैं।
निजके अनंत दृग ज्ञान वीर्य, सुखरूप चतुष्टय भर्ता हैं।।
निज आत्मा से उत्पन्न परम, आह्लाद सौख्य हो प्राप्त हमें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।9।।

हे नाथ 'विश्वभू' केवलज्ञान, अपेक्षा व्याप्त विश्व में हो।
अथवा भू-मंगल करे विश्व का, या वृद्धी भी करते हो।।
भू गत्यर्थक-ज्ञानार्थक है, त्रैलोक्य ज्ञान है नाथ तुम्हें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।10।।

'अपुनर्भव' नाथ पुनर्भव नहिं, प्रभु जन्म मरण से छूट चुके।
अथवा भव-रुद्र विष्णु ब्रह्मा, इन देवरूप नहिं हो सकते।।
अर्हत सर्वज्ञ आप भगवन्, नहिं पुनर्जन्म धरते जग में।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।11।।

'विश्वात्मा' आप विश्व को निज, सदृश गिनते विश्वात्मा हैं।
या विश्व-सुकेवल ज्ञानमयी, आत्मा-स्वरूप विश्वात्मा हैं।।
त्रिभुवनस्थित प्राणीगण को, निज सदृश गिना सु दयालु बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।12।।

प्रभु आप 'विश्वलोकेश' विश्वके-तीनलोक के जीवों के।
प्रभु ईश-नाथ बस एक आप, नहिं अन्य कोई भी बन सकते।।
जो खुद की रक्षा कर न सके, वो जग के ईश कभी न बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।13।।

हे नाथ! 'विश्वतश्चक्षु' आप, सब विश्व-लोक में व्याप्त हुआ।
चक्षू-केवल दर्शन प्रभु का, इससे प्रभु ने सब देख लिया।।
श्रुतचक्षू से केवलचक्षू, पाया जगदर्शी आप बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।14।।

'अक्षर' प्रभु क्षरण न होता है,नहिं चलित आप हो सकते हैं।
या अक्ष-इंद्रियों को मन को, वश में कर अक्षर बनते हैं।।
तुम नाम स्तुति करते करते, मेरा भी अक्षर नाम बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।15।।

प्रभु आप 'विश्ववित्' ज्ञानरश्मि से, विश्व माहिं सुप्रविष्ट हुये।
सब विश्व-चराचर जग जाना, अतएव विश्ववित् प्रगट हुये।।
यह आत्मा ज्ञानस्वभावी है, मुझ अल्पज्ञान भी पूर्ण बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।16।।

प्रभु आप 'विश्वविद्येश' आपकी, विद्या विश्वा-सकला है।
वह सकल विमल कैवल्य ज्ञानमय, पूर्ण स्वरूप अविकला है।।
तुम गुण गा गाकर भव्य जीव, सब विद्याओं के ईश बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।17।।

प्रभु 'विश्वयोनि' संपूर्ण पदार्थों, की उत्पति के कारण हो।
संपूर्ण पदार्थों के उपदेशक, विश्वयोनि जगतारण हो।।
तुम नाम मंत्र जपते जपते, भाक्तिक जन तुम सम नाथ बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।18।।

प्रभु आप 'अनश्वर' कभी नाश, नहिं हो सकता युग युग तक भी।
आत्मा के नाशक गुणघातक, कर्मों का नाश किया है भी।।
प्रभु मुझे अनश्वर पद दे दो, इस हेतु वंदना करूँ तुम्हें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।19।।

प्रभु आप 'विश्वदृश्वा' सारे, जग को इक क्षण में देख लिया।
तुम गुणस्तुति करते करते, भव्यों ने तुमको देख लिया।।
मैं भी तुमको अवलोकन कर, निज को देखूँ यह युक्ति बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।20।।

'विभु' आप विशेष करें मंगल, भवि के तारन में समरथ हैं।
निज समवसरण में प्रभू राजते, लोकालोक विजानत हैं।।
निजकेवलज्ञान किरण से लोका लोक व्याप्त कर विभू बनें।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।21।।

'धाता' चहुँगति में पड़े जीव को, निकाल कर मुक्तिपद में।
धर देते अथवा सर्व प्राणियों, का पालन करते जग में।।
प्रभु परम कारुणिक आप सर्व, रक्षा कर धाता स्वयं बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।22।।

'विश्वेश' विश्व-त्रैलोक्य ईश-स्वामी त्रिभुवन के रक्षक हो।
उपदेश अहिंसामयी दिया, सबके बंधू प्रतिपालक हो।।
प्रभु धर्म आपका विश्व धर्म, भवसागर तारण सेतु बने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।23।।

प्रभु आप 'विश्वलोचन' त्रिभुवन, प्राणी के चक्षु समान कहें।
सबको हित का उपदेश दिया, इस कारण सबके नेत्र कहें।।
अथवा सब जगका इक क्षण में, अवलोकन करते आप घने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।24।।

प्रभु आप 'विश्वव्यापी' कण कण में, ज्ञान आपका व्याप रहा।
त्रिभुवन के सर्वपदार्थ आप, जाने ऐसा विज्ञान लहा।।
नहिं आत्म प्रदेशों से व्यापक, तन में ही रहें प्रदेश घने।
मैं प्रभु नामावलि को वंदूं, मेरे सब इच्छित कार्य बनें।।25।।

–हरिगीतिका छंद–

'विधु[1]' आप कर्म विधान करते, कर्म विधि बतलावते।
निजज्ञान केवल किरण से, मोहान्धकार भगावते।।
निज ज्ञानज्योती प्रगट हेतू, नाथ मैं वंदन करूँ।
तुम नाम मंत्र अमोघ शक्ती, उसी का चिंतन करूँ।।26।।

प्रभु आप 'वेधा' धर्म की, सृष्टी करें सुखहेतु हैं।
जिनधर्म तीर्थ चलावते, इस हेतु भवदधि सेतु हैं।।निज.।।27।।

प्रभु नाम 'शाश्वत' धारते, शश्वत विराजें मोक्ष में।
निज भक्त को शाश्वत परमपद, दें रहे हैं लोक में।।निज.।।28।।

प्रभु 'विश्वतोमुख' समवसृति में, चारदिश चउमुख दिखें।
या जल सदृश भवि पाप कीचड़, धोय स्वच्छ सु कर सकें।।निज.।।29।।

प्रभु 'विश्वकर्मा' कर्मभूमी, की व्यवस्था के समय।
असि मषि प्रभृति सब क्रिया उप–देशी सभी को उस समय।।निज.।।30।।

1. आदि पुराण में विधि पाठ है।

प्रभु 'जगज्जेष्ठ' त्रिलोक में भी, ज्येष्ठ-श्रेष्ठ महान हैं।
तुमसे बड़ा नहिं और कोई, अतः सर्व प्रधान हैं।।
निज ज्ञानज्योती प्रगट हेतू, नाथ मैं वंदन करूँ।
तुम नाम मंत्र अमोघ शक्ती, उसी का चिंतन करूँ।।31।।

प्रभु 'विश्वमूर्ति' अनंत गुणमय, देहधारी आप हैं।
या सर्व वस्तु ज्ञान दर्पण में, झलकते साफ हैं।।निज.।।32।।

भगवन्! 'जिनेश्वर' भव्य सम्य–ग्दृष्टि मुनिगण आदि के।
ईश्वर कहाते आप इस, हेतू जिनेश्वर सार्व के।।निज.।।33।।

प्रभु 'विश्वदृक्' संसार की, सब वस्तु सत्तामात्र से।
अवलोकते हैं आप नितप्रति, सर्वदर्शी नाम से।।निज.।।34।।

प्रभु 'विश्वभूतेशा' तुम्हीं, सब प्राणिगण के ईश हैं।
या विश्वभू-त्रैलोक्य लक्ष्मी, ईश सब भूतेश हैं।।निज.।।35।।

प्रभु 'विश्वज्योती' विश्व के, लोचन जगत में ख्यात हैं।
प्रभु आप केवलज्ञान ज्योती, सर्व जग में व्याप्त है।।निज.।।36।।

भगवन्! 'अनीश्वर' आपसम, नहिं अन्य ईश्वर लोक में।
प्रभु ईश सबके आप नहिं कोइ, आपका प्रभु लोक में।।निज.।।37।।

'जिन' आप घाती कर्मशत्रू, जीतकर 'जिन' हो गये।
मन इंद्रियों को जीतकर, 'जिन' नाम सार्थक कर दिये।।निज.।।38।।

प्रभु 'जिष्णु' तुम कर्मारि जीतन, का स्वभाव प्रसिद्ध है।
जयशील शासन आपका, जग में सदैव विशुद्ध है।।निज.।।39।।

प्रभु 'अमेयात्मा' आप में, आनन्त्य गुण अतिशय भरे।
नहिं जान सकता अन्य कोई, माप नहिं सकता खरे।।निज.।।40।।

प्रभु 'विश्वरीश' तुम्हीं मही के, ईश जग में ख्यात हैं।
इस हेतु भविजन नित्य ही, तुमको नमाते माथ हैं।।निज.।।41।।

प्रभु 'जगत्पति' त्रैलोक्य के, स्वामी भविक त्राता तुम्हीं।
रक्षा करो सब द्वंद्व से, सुख शांति होवे आज ही।।निज.।।42।।

हे नाथ! आप 'अनंतजित्', मिथ्यात्व आदी जीत के।
प्रभु नाम सार्थक कर दिया, संसार अनंत सुजीत के।।निज.।।43।।

प्रभु 'अचिन्त्यात्मा' तुम स्वरूप, अचिन्त्य जन मन वचन से।
नहिं चिंतवन कर सके कोई, आप आत्मा चित्त से।।निज.।।44।।

प्रभु 'भव्यबंधु' भव्य जन के, बंधु उपकारक तुम्हीं।
जो रत्नत्रय के योग्य हैं, उनके हितंकर हो तुम्हीं।।निज.।।45।।

भगवन्! 'अबंधन' कर्म बंधन, से रहित गुणखान हो।
सब मोहद्वय आवरण विघ्न, विघात कर जग मान्य हो।।निज.।।46।।

भगवन्! 'युगादीपुरुष' चौथे, काल युग की आदि में।
प्रभु तीर्थकर पहले हुये, युग आदि पुरुष भरत में।।निज.।।47।।

'ब्रह्मा' सुकेवल ज्ञान आदिक, गुण सुवृद्धिंगत हुये।
निज शुद्ध आत्मजनित सुखामृत, तृप्त ब्रह्मा तुम्हीं हुये।।निज.।।48।।

प्रभु 'पंचब्रह्मामय' सु पांचों, ज्ञानमय विख्यात हो।
या पंचपरमेष्ठी स्वरूप, अनंत गुण से सार्थ हो।।निज.।।49।।

'शिव' मोक्ष हो आनंदमय, हो सर्व दोष विहीन हो।
निर्वाण अक्षय शांत परम, कल्याण पद में लीन हो।।निज.।।50।।

–रोला छंद–

प्रभु 'पर' नाम सुआप, सब जीवों को पालें।
ज्ञान आदि गुण सर्व, पूरण करने वाले।।
नाम मंत्र तुम पूज्य, मैं वंदूं भक्ती से।
भविमन पंकज सूर्य, शिव पाऊँ युक्ती से।।51।।

'परतर' नाम धरंत, सबसे श्रेष्ठ तुम्हीं हो।
हित उपदेश करंत, प्रभु सर्वेश तुम्हीं हो।।नाम.।।52।।

'सूक्ष्म' आप मन इंद्रिय, इनके विषय नहीं हो।
केवलज्ञान अतींद्रिय, उनके विषय सही हो।।नाम.।।53।।

'परमेष्ठी' प्रभु परम, उत्तम पद में तिष्ठो।
अर्हत सिद्धाचार्य, आदि पाँचपद तिष्ठो।।
नाम मंत्र तुम पूज्य, मैं वंदूं भक्ती से।
भविमन पंकज सूर्य, शिव पाऊँ युक्ती से।।54।।

नाम 'सनातन' आप, सदा एक से रहते।
सदा सदा विद्मान, रूप पुरातन धरते।।नाम.।।55।।

'स्वयंज्योति' प्रभु आप, स्वयं आत्मा ज्योती।
चक्षु जगत्प्रकाश, स्वयं सूर्यमय ज्योती।।नाम.।।56।।

नाथ! आप 'अज' नाम, जग में नहिं उत्पत्ती।
सदा जपूँ तुम नाम, मिले निजातम शक्ती।।नाम.।।57।।

नाथ 'अजन्मा' आप, जन्म कभी नहिं धारो।
गर्भवास नहिं आप, मेरा जन्म निवारो।।नाम.।।58।।

'ब्रह्मयोनि' प्रभु आप, द्वादशांगमय वेदा।
इनकी उतपति आप, से होती विन खेदा।।नाम.।।59।।

नाथ 'अयोनिज' आप, योनी लाख चुरासी।
इनमें नहिं उत्पाद, हरो सकल दुख राशी।।नाम.।।60।।

'मोहारीविजयीश', मोहशत्रु को जीता।
या अरि मोह के आप, विजयशील शिवनीता[1]।।नाम.।।61।।

मृत्यु मल्ल को जीत, 'जेता' आप कहाये।
सर्व जगत के मीत[2], कर्म शत्रु जय पाये।।नाम.।।62।।

धर्मचक्र के ईश, श्री विहार कर जग में।
भव्यों को संबोध, 'धर्मचक्रि' त्रिभुवन में।।नाम.।।63।।

प्रभु 'दयाध्वज' आप, दया ध्वजा फहरायी।
अथवा दया सुमार्ग, प्रगटाया सुखदायी।।नाम.।।64।।

---

1. प्राप्त किया। 2. मित्र।

'प्रशान्तारि' प्रभु आप, कर्म शत्रु बलवंता।
उनको किया प्रशांत, पूर्ण शांत भगवंता।।नाम.।।65।।
नाथ 'अनंतात्मा', अनंत केवलज्ञानी।
या अनंत अविनाश, अंतरहित शिवगामी।।नाम.।।66।।
'योगी' चित्त निरोध, करके निज को ध्याया।
मन वच तन कर शुद्ध, परम समाधि लगाया।।नाम.।।67।।
'योगी' मुनि के ईश, गणधर से भी अर्चित।
'योगिश्वरार्चित' गीत, तीन भुवन में चर्चित।।नाम.।।68।।
नाथ 'ब्रह्मवित्' आप, ब्रह्म-आत्म को जाना।
उसका अनुभव-स्वाद, कर लीना शिव थाना।।नाम.।।69।।
नाथ 'ब्रह्मतत्त्वज्ञ', आत्मतत्त्व के ज्ञानी।
ज्ञान दया का मर्म, जान हुये निज ज्ञानी।।नाम.।।70।।
'ब्रह्मोद्याविद्' आप, ब्रह्म विद्या के वेत्ता।
आत्म विद्या के नाथ, त्रिभुवन के गुरु नेता।।नाम.।।71।।
नाथ 'यतीश्वर' आप, यतियों के ईश्वर हो।
रत्नत्रय में यत्न, करें यती उन गुरु हो।।नाम.।।72।।
'शुद्ध' आप रागादि, भाव कर्ममल रहिता।
फटिकमणी सम नाथ, करो मुझे मल रहिता।।नाम.।।73।।
'बुद्ध' आप संपूर्ण, वस्तु जानते ज्ञानी।
वेक्वलज्ञान सुबुद्धि, पायी अंतर्यामी।।नाम.।।74।।
'प्रबुद्धात्मा' आप, सदा आपकी आत्मा।
शुद्ध ज्ञान से जग–मगती सर्व गुणात्मा।।नाम.।।75।।

–चौपाई–

नाम 'सिद्धार्थ' धरें जगसिद्धा।
सर्व प्रयोजन हुये सुसिद्धा।।
मैं प्रभु नाममंत्र को जपहूँ।
परमानंदमय निजसुख भजहूँ।।76।।

प्रभो 'सिद्धशासन' तुम जग में।
शासन सर्व हितंकर सच में।।
मैं प्रभु नाममंत्र को जपहूँ।
परमानंदमय निजसुख भजहूँ।।77।।
आप 'सिद्ध' निजगुणमणि नंते।
प्राप्त किया, शिवगामी संते।।मै.।।78।।
प्रभु 'सिद्धांतविद्' सर्वप्रकाशी।
द्वादशांग जानो, निज भासी।।मै.।।79।।
'ध्येय' आप, मुनिगण आराध्या।
योगिध्यान के ध्येय सुसाध्या।।मै.।।80।।
'सिद्धसाध्य' प्रभु के सब कार्या।
सिद्ध हो चुके हैं, निरबाध्या।।मै.।।81।।
नाथ! 'जगद्धित' जग हितकर्ता।
सबके लिये 'पथ्य' सुखभर्ता।।मै.।।82।।
प्रभु 'सहिष्णु' गुण क्षमा धरे हो।
सहनशील हो सौख्य भरे हो।।मै.।।83।।
'अच्युत' निज स्वभाव से च्युत ना।
ज्ञानादिकगुण युत परमात्मा।।मै.।।84।।
प्रभु 'अनंत' अंतक से रहिता।
गुण अनंत सुख आदिक सहिता।।मै.।।85।।
'प्रभविष्णू' बहु प्रभावशाली।
शक्ती अनंती समरथशाली।।मै.।।86।।
नाथ 'भवोद्भव' भव सब श्रेष्ठा।
पंचविद्या संसार विनष्टा।।मै.।।86।।
नाथ 'प्रभूष्णु' सब शक्तीशाली।
इंद्रादिक के प्रभु गुणमाली।।मै.।।88।।

'अजर' वृद्ध नहिं होते कबहूँ।
सर्व दुःख नाशो मुझ अबहूँ।।मै.।।89।।
नाथ 'अजर्य[1]' नाम के धारी।
तुम गुण जीर्ण न हों अविकारी।।मै.।।90।।
'भ्राजिष्णु' ज्ञानादि गुणों से।
अतिशय दीप्तमान् निज सुख से।।मै.।।91।।
'धीश्वर' केवलज्ञानमयी जों
बुद्धी उसके ईश्वर प्रभु हो।।मै.।।92।।
'अव्यय' व्यय नहिं नाथ तुम्हारा।
शिवपद प्राप्त किया सुखकारा।।मै.।।93।।
कर्मेंधन को अग्निसमाना।
'विभावसु' तमहर रवि माना।।मै.।।94।।
पुनि उत्पन्न जगत में नहिं हों।
'असंभूष्णू' मुझ जन्म विलय हो।।मै.।।95।।
'स्वयंभूष्णु' स्वयमेव हुये हो।
सिद्ध अवस्था प्राप्त किये हो।।मै.।।96।।
नाथ 'पुरातन' बहु प्राचीना।
द्रव्यदृष्टि से आदि विहीना।।मै.।।97।।
'परमात्मा' अतिशय उत्कृष्टा।
परम ज्ञानसुख गुणमणि निष्ठा।।मै.।।98।।
परमोत्कृष्ट ज्योतिमय ज्ञानी।
'परंज्योति' गुणमणि रजधानी।।मै.।।99।।
तीन जगत् के परमेश्वर हो।
'त्रिजगत्परमेश्वर' प्रभु तुम हो।।मै.।।100।।

1. टीकाकार ने 'अयज्यः' पाठ माना है।

'श्रीमान' नाम से लेकर के, 'त्रिजगत्परमेश्वर' तक नामा।
सौ नाम आपके सार्थक हैं, इंद्रों से स्तुत गुणधामा।।
इन नाममंत्र को जप जप के, बस 'सिद्ध' नाम इक पा जाऊँ।
प्रभु तुम सम शुद्ध अवस्था हो, नहिं बार बार जग में आऊँ।।1।।

।।इति श्रीमदादिशतम्।।

(2)

चाल-हे दीनबंधु.....

हे नाथ 'दिव्यभाषापति', आप कहाये।
अठरा महाभाषा व लघू, सात सौ गाये।।
तुम नाम मंत्र भक्ती, भव व्याधि हरेगी।
ये ज्ञानज्योति देके, अज्ञान हरेगी।।101।।
हे नाथ 'दिव्य' तुम हो, अतिशय सुरूप से।
नर सुर से अधिक सुंदर, तन आपका दिपे।।तुम.।।102।।
हे 'पूतवाक्' आपकी, वाणी पवित्र है।
सब दोष से विवर्जित, अतिशय विशुद्ध है।।तुम.।।103।।
हे नाथ 'पूतशासन', तुम मत पवित्र है।
वह पूर्व अपर के विरोध, दोष रहित है।।तुम.।।104।।
'पूतात्मा' प्रभु आपकी, आत्मा पवित्र है।
अरु आप भव्यजीव को, करते पवित्र हैं।।तुम.।।105।।
हे नाथ 'परमज्योति' आप, ज्योतिपुंज हैं।
उत्कृष्ट ज्ञानज्योति रूप, तेजपुंज हैं।।तुम.।।106।।
हे नाथ 'धर्माध्यक्ष' चरित, के अधीश हो।
दशधर्म के अध्यक्ष, ज्ञान के अधीश हो।।तुम.।।107।।
इंद्रियजयी दमी मुनी के, ईश आप हैं।
हे नाथ 'दमीश्वर' प्रसिद्ध, मुक्तिनाथ हैं।।तुम.।।108।।

संसार मोक्ष संपदा, लक्ष्मी के पती हों।
हे नाथ आप 'श्रीपति', मुक्ती के पती हो।।तुम.।।109।।
'भगवान्' आप ज्ञान व, ऐश्वर्य पूर्ण हो।
सुरपूज्य आठ प्रातिहार्य, विभव पूर्ण हो।।तुम.।।110।।
'अर्हंत' इंद्र आदि से, पूजा को प्राप्त हो।
अरि रज[1] रहस्य चार कर्म, रहित आप हो।।तुम.।।111।।
हे नाथ 'अरज' आप,कर्मधूलि हीन हो।
ज्ञानावरण व दर्शना–वरण विहीन हो।।तुम.।।112।।
हे नाथ 'विरज' आप, कर्मरज विहीन हो।
भव्यों की कर्मधूलि नाश, में प्रवीण हो।।तुम.।।113।।
हे नाथ 'शुचि' ब्रह्मचर्य, से पवित्र हो।
निज शुद्ध आत्म तीर्थ स्नान, से पवित्र हो।।तुम.।।114।।
हे, 'तीर्थकृत्' भवोदधि से, भव्य तारते।
श्रुत द्वादशांग तीर्थ के, कर्ता बखानते।।तुम.।।115।।
संपूर्ण मोह आवरण व, विघ्न[2] नाशिया।
कैवल्य पाय 'केवली' हो, मुनि भाषिया।।तुम.।।116।।
'ईशान' आप अनंत शक्ति, से समर्थ हो।
अहमिंद्र आदि के भि ईश, जग प्रसिद्ध हो।।तुम.।।117।।
'पूजार्ह' पांचविधा, अर्चना के योग्य हो।
मह कल्पतरु ऐन्द्रध्वज, आदि पूज्य हो।।तुम.।।118।।
सब कर्म मल कलंक धोय, शुद्ध आत्मा।
हे नाथ 'स्नातक' सुज्ञान, चंद्रपूर्णिमा[3]।।तुम.।।119।।
हे नाथ 'अमल' देह, मलादि विहीन हो।
नैर्मल्य आप राग आदि, दोष क्षीण हो।।तुम.।।120।।

1. अरि–मोहकर्म, रज–ज्ञानावरण, दर्शनावरण कर्म, रहस्य–अंतराय कर्म। 2. अंतराय कर्म।
3. पूर्णज्ञान सहित हैं।

'अनंतदीप्ति' नाथ, ज्ञानदीप्ति धारते।
निजदेह दीप्ति से समस्त, ध्वांत वारते।।तुम.।।121।।
प्रभु पांच विधे ज्ञान, से 'ज्ञानात्मा' कहे।
कैवल्यज्ञानदेहमयी, आत्मा कहे।।तुम.।।122।।
हे नाथ 'स्वयंबुद्ध', स्वयं ही प्रबुद्ध हो।
गुरु की सहाय बिन समस्त, ज्ञान युक्त हो।।तुम.।।123।।
'प्रजापति' त्रिलोक जीव, रक्षते पती।
संपूर्ण प्रजा को सदा, पालें प्रजापती।।तुम.।।124।।
हे नाथ 'मुक्त' कर्म, बंधनादि मुक्त हों
संपूर्ण दोष से विमुक्त, भ्रमण मुक्त हो।।तुम.।।125।।

चाल–नंदीश्वर पूजा

प्रभु 'शक्त' नाम है आप, परिषह सहन किया।
तुम भक्ति करे निष्पाप, इससे शरण लिया।।
तुम नाम मंत्र की भक्ति, भवभव ताप हरे।
प्रगटावे आतम शक्ति, सौख्य अबाध करे।।126।।
प्रभु 'निराबाध' उपसर्ग, बाधा विरहित हो।
निज भक्तों को सुख स्वर्ग, देते शिवप्रद हो।।तुम.।।27।।
प्रभु 'निष्कल' देह विमुक्त, काल कला हीना।
विज्ञान कलागुण युक्त, कवलाहार बिना।।तुम.।।128।।
'भुवनेश्वर' त्रिभुवन ईश, भविजन के त्राता।
मैं जजूँ नमाकर शीश, पाऊँ सुख साता।।तुम.।।129।।
हे नाथ 'निरंजन' आप, कर्मांजन शून्या।
सब द्रव्यभाव नोकर्म, विरहित सुख पूर्णा।।तुम.।।130।।
हे 'जगज्योति' जिनराज, केवलज्ञान लहा।
सब लोक अलोक प्रकाश, अनुपम ज्योतिमहा।।तुम.।।131।।

हे नाथ 'निरुक्तोक्ती' य, सार्थक वचन धरो।
सब पूर्वापर अविरोधि, हित उपदेश करो।।तुम.।।132।।

हे नाथ 'निरामय' आप, व्याधिविवर्जित हो।
पूजत ही स्वास्थ्य सुलाभ, भविजन हर्षित हो।। तुम.।।133।।

'अचलस्थिति' हे जिननाथ, तुम थल अचल कहा।
हो अचल आत्म थल वास, पूजूँ हरस महा।।तुम.।।134।।

'अक्षोभ्य' नाथ नहिं क्षोभ, तुममें कभी हुआ।
सब मिटे चित्त का क्षोभ, ये ही विनय किया।।तुम.।।135।।

'कूटस्थ' कूट-लोकाग्र, ऊपर तिष्ठे हो।
करिये मुझ मन एकाग्र, ईप्सित देते हो।।तुम.।।136।।

हे नाथ आप 'स्थाणु', गमनागमन नहीं।
है लोकशिखर विश्राम, काल अनंत सही।।तुम.।।137।।

प्रभु 'अक्षय' क्षय नहिं होय, काल अनंते भी।
या इंद्रिय सुख नहिं कोय, आप अतीन्द्रिय भी।।तुम.।।138।।

हे नाथ! 'अग्रणी' आप, जग में मुख्य सही।
ले जाते तुम लोकाग्र, भवि को सौख्य मही।।तुम.।।139।।

हे नाथ 'ग्रामणी' आप, जग में भव्यों को।
करवाते मुक्ती प्राप्त, निज सुख दो मुझको।।तुम.।।140।।

भविजन को हितपथ माहिं, ले जाते 'नेता'।
मैं पूजूँ भक्ति बढ़ाय, शिवपथ के नेता।।तुम.।।141।।

प्रभु द्वादशांगमय शास्त्र, रचना करते हो।
इसलिये 'प्रणेता' आप, हित उपदिशते हो।।तुम.।।142।।

प्रभु न्यायशास्त्र उपदेश, करते आप सदा।
तुम 'न्यायशास्त्रवित्' नाम, कहते इंद्र मुदा।।तुम.।।143।।

नित धर्मामृत उपदेश, देते गुरु 'शास्ता'।
हित अनुशास्ता परमेश, देवो मुझ साता।।तुम.।।144।।

प्रभु 'धर्मपती' तुम नाम, धर्माधीश्वर हो।
दश धर्मों के तुम धाम, शिवप्रद ईश्वर हो।।
तुम नाम मंत्र की भक्ति, भवभव ताप हरे।
प्रगटावे आतम शक्ति, सौख्य अबाध करे।।145।।

प्रभु चउविध[1] धर्मसमेत, धर्म्य कहाते हो।
रत्नत्रय[2] जीवदयादि[3], वस्तुस्वभाव[4] कहो।।तुम.।।146।।

तुम आत्मा धर्मस्वरूप, शिवफल प्राप्त किया।
'धर्मात्मा' नाम अनूप, सुरपति आन दिया।।तुम.।।147।।

प्रभु 'धर्मतीर्थकृत' आप, धर्म सुतीर्थ किया।
सम्यक् चारितमय तीर्थ, का उपदेश दिया।।तुम.।।148।।

प्रभु 'वृषध्वज' आप प्रसिद्ध, धर्मध्वजा धारो।
तुम वृषभ चिन्ह से सिद्ध, पाप सु परिहारो।।तुम.।।149।।

वृष-धर्म अहिंसारूप, उसके स्वामी हो।
हो 'वृषाधीश' निज रूप, अंतर्यामी हो।।तुम.।।150।।

–चामर छंद–

नाथ 'वृषकेतु' आप, धर्म की ध्वजा धरो।
जैन धर्म की ध्वजा, त्रिलोक में भि फरहरो।।
आप नाममंत्र की, सदा करूँ उपासना।
आत्म सौख्य प्राप्त हो, जहाँ पे दुःख रंच ना।।151।।

कर्म शत्रु नाश हेतु, धर्मशास्त्र धारते।
नाथ! 'वृषायुध' अनंत, जन्म को निवारते।।आप.।।152।।

आप 'वृष' नाम धारि, धर्मरूप विश्व में।
धर्ममय पियूष वृष्टि–कारि मेघ भव्य में।।आप.।।153।।

नाथ 'वृषपती' दया–मयी सुधर्म के पती।
आप शर्ण पाय भव्य, लेय पंचमी गती।।आप.।।154।।

1. क्षमादिधर्म। 2. रत्नत्रयधर्म। 3. जीवदया धर्म। 4. वस्तु स्वभाव धर्म।

नाथ 'भतृ' आप भव्य, जीव पोषते सदा।
दुःख से निकाल श्रेष्ठ, सौख्य में धरें सदा।।आप.।।155।।

नाथ 'वृषभांक' बैल, चिन्ह आपका कहा।
श्रेष्ठ धर्म चिन्ह से, समस्त को सुखी किया।।आप.।।156।।

नाथ 'वृषोद्भव' सुआप, धर्म को जनम दिया।
धर्म से हि तीर्थनाथ, होय जन्म धारिया।।आप.।157।।

भो 'हिरण्यनाभि' स्वर्ण, रूप नाभि धारते।
आप गर्भ पूर्व इन्द्र, स्वर्णवृष्टि कारते।।आप.।।158।।

'भूत आतमा' जिनेश! सत्यरूप आतमा।
आप पाद शीश नाय, होउं अंतरातमा।।आप.।।159।।

'भूभृत् प्रभो! समस्त, भव्यजीव पोषते।
आप शर्ण आय साधु, सर्व कर्म धोवते।।आप.।।160।।

'भूत भावनो' सुआप, भावना सुउत्तमा।
हाथ जोड़ शीश नाय, भव्य जांय मुक्ति मा।।आप.।।161।।

नाथ 'प्रभव' आप मुक्ति, प्राप्ति हेतु भव्य को।
आप जन्म है प्रशंस, सौख्य हेतु विश्व को।।आप.।।162।।

नाथ! 'विभव' भव विमुक्त, भव्य भव विनाशते।
भव विशिष्ट पाय धर्म-चक्र को चलावते।।आप.।।163।।

नाथ! 'भास्वान्' आप, ज्ञानदीप्ति रूप हो।
आत्म को प्रकाश्य भव्य, को प्रकाश हेतु हो।।आप.।।164।।

नाथ! 'भव' उत्पत्ति व्यय व, ध्रौव्य रूप हो।
भव्य चित्त मांहि होय, पापपंक धोत हो।।आप.।।165।।

'भाव' आप चित्स्वरूप, स्वात्म में हि लीन हो।
साधुवृन्द के हृदय, निलीन दुःख हीन हो।।आप.।।166।।

प्रभो! 'भवांतको' चतु-र्गती भवों कुनाशिया।
भव्य के अनंतभव, क्षणेक में विनाशिया।।आप.।।167।।

भो! 'हिरण्यगर्भ' गर्भ, पूर्व स्वर्ण वर्षते।
आपके पिता कि जीत, ना किसी से हो सके।।
आप नाममंत्र की, सदा करूँ उपासना।
आत्म सौख्य प्राप्त हो, जहाँ पे दुःख रंच ना।।168।।

'श्रीगरभ' सुआप, अंतरंग नंतसंपदा।
श्री सु आदि देवियों ने, मात सेव की मुदा।।आप.।।169।।

भो! 'प्रभूतविभव' आप-का विभव महान है।
तीन लोक साम्राज्य, पाय सुख निधान हैं।।आप.।।170।।

नाथ! 'अभव' आप जन्म, ना धरें कभी यहां।
आप पाद सेय भव्य, जन्म नाशते यहाँ।।आप.।।171।।

नाथ! 'स्वयंप्रभु' आप, ही स्वयं समर्थ हैं।
सर्व कर्म नाश हेतु, आप पूर्ण दक्ष हैं।।आप.।।172।।

प्रभो! 'प्रभूतात्मा', सुआप आतमा यहाँ।
ज्ञान से समस्त लोक, व्यापता सुखावहा[1]।।आप.।।173।।

'भूतनाथ' सर्वजीव, के हि आप नाथ हो।
आप भक्ति से मुनीश, वृंद भी सनाथ हों।।आप.।।174।।

हो 'जगत्प्रभु' त्रिलोक, स्वामि हो समर्थ हो।
सर्व सौख्यदान हेतु, आप पूर्ण दक्ष हो।।आप.।।175।।

-सखी छंद-

'सर्वादि' सर्व-जग आदी। तुमसे सृष्टी उत्पादी।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।176।।

हे नाथ! 'सर्वदृक्' तुम हो। सब वस्तु देखते प्रभु हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।177।।

प्रभु 'सार्व' सभी को पालें। सबका हित करने वाले।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।178।।

1. सुख को देने वाला।

'सर्वज्ञ' सर्व जग जानो। त्रैलोक्य त्रिकालिक जानो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।179।।
प्रभु तुम्हीं 'सर्वदर्शन' हो। सब कुमतों के मर्दक हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।180।।
'सर्वात्मा' तुम अंतर में। सब वस्तु झलकती क्षण में।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।181।।
प्रभु आप 'सर्वलोकेशा'। तिहुंलोक अलोक अधीशा।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।182।।
प्रभु आप 'सर्वविद्' मानें। इक क्षण में सबको जानें।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।183।।
प्रभु 'सर्वलोकजित्' तुम हो। पणविध संसार विजित् हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।184।।
प्रभु 'सुगति' मोक्षगति सुंदर। कैवल्यज्ञान उत्तम धर।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।185।।
'सुश्रुत' अतिशायि प्रसिद्धा। सब भावश्रुतों के धर्ता।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।186।।
'सुश्रुत्' सब अरज सुना है। भव्यों हित मार्ग भणा है।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।187।।
प्रभु आप वचन उत्तम हैं। अतएव 'सुवाक्' प्रथम हैं।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।188।।
प्रभु 'सूरि' सभी के गुरु हो। सब विद्याओं के धुरि हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।189।।
'बहुश्रुत' सब श्रुत के ज्ञानी। तुमसे प्रकटी जिनवाणी।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।190।।
'विश्रुत' त्रिभुवन विख्याता। श्रुत बिना चराचार ज्ञाता।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।191।।

'विश्वतःपाद' तम घाती। तुम ज्ञान किरण जग व्यापी।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।192।।
प्रभु 'विश्वशीर्ष' सिरताजो। तुम लोक शिखर पर राजो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।193।।
प्रभु 'शुचिश्रवा' तुम कर्णा। भवि वचन सुनें दें शर्णा।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।194।।
प्रभु तुम 'सहस्रशीर्षा' हो। आनन्त्य सुखी कीर्ता हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।195।।
'क्षेत्रज्ञ' क्षेत्र-आत्मा को। जाना सब पर आत्मा को।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।196।।
प्रभु 'सहस्राक्ष' जग मानें। आनन्त्य पदार्थ सुजानें।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।197।।
प्रभु 'सहस्रपात्' जगव्यापा। तुम बल अनंत जगख्याता।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।198।।
'भूत भव्यभवद्भर्ता' हो। त्रैकालिक सुख कर्ता हो।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।199।।
'विश्वविद्यामहेश्वर' तुम ही। सब विद्या के ईश्वर ही।
तुम नाममंत्र मैं वंदूं, सब आधि-व्याधि से छूटूँ।।200।।

–शंभु छंद–

दिवभाषापति से लेकर के, सुविश्वविद्यामाहेश्वर तक।
सौ नाम मंत्र तुम जपने से, शतखंड खंड हो जावें अघ।।
मैं अतिशय भक्ती श्रद्धा से, तुम नाम मंत्र को नित वंदूं।
नित आतम अमृतरस पीकर, सब जन्म मरण दुख को खंडूं।।1।।

।।इति श्रीदिव्यादिशतम्।।

(3)

–नरेन्द्र छंद–

समीचीन गुणसहित आप, अतिशय स्थूल कहे हो।
'स्थविष्ठ' नाम के धारी, त्रिभुवन पूज्य भये हो।।
प्रभु तुम नाम मंत्र को वंदत, आतम निधि को पाऊँ।
परमाल्हाद परमसुख अमृत, पीकर शिवपद पाऊँ।।201।।

वृद्ध आप ज्ञानादिगुणों से, अत 'स्थविर' कहाये।
मुक्तीपद में तिष्ठ रहे हो, मुनिगण शीश नमायें।।प्रभु.।।202।।

नाथ! 'ज्येष्ठ' तीनों लोकों में, सबसे बड़े तुम्हीं हो।
इंद्रादिक से प्रशंसनीया, गुणमणि जड़े तुम्हीं हो।।प्रभु.।।203।।

सबके अग्रगामि होने से, 'प्रष्ठ' आप कहलाये।
तुम गुणमाला जपते भविजन, दुख दारिद्र नशायें।।प्रभु.।।204।।

इंद्र फणींन्द्र नरेन्द्र चंद्र रवि, सबको अतिशय प्रिय हो।
सब मुनीन्द्र से वंद्य 'प्रेष्ठ' प्रभु, त्रिभुवन जनमन प्रिय हो।।प्रभु.।।205।।

केवलज्ञान सुविस्तृत धीधर, प्रभु 'वरिष्ठधी' मानें।
स्वपर भेद विज्ञान बुद्धि दो, जिससे भव दुख हानें।।प्रभु.।।206।।

अत्यंत स्थिर-नित्य आप हैं, अतएव 'स्थेष्ठ' बखानें।
शत इंद्रों के मध्य विराजें, कर्म कुलाचल हानें।।प्रभु.।।207।।

सब द्वादशगण में अतिशयगुरु, आप 'गरिष्ठ' कहे हो।
भक्तों को शिवमार्ग दिखाकर, कर्म कलंक दहे हो।।प्रभु.।।208।।

गुण अनंत से प्रभू आप ही रूप अनेक धरे हो।
अतः नाथ! 'बंहिष्ठ' नाम से, अतिशय रूप धरे हो।।प्रभु.।।209।।

सबमें अतिशय प्रशस्य हो प्रभु, 'श्रेष्ठ' नाम जग जाने।
सर्व दोष निरवारण करिये, गुण से भरूँ खजानें।।प्रभु.।।210।।

अतिशय सूक्ष्म मात्र योगी के, ध्यान गम्य ही तुम हो।
अतः 'अणिष्ठ' नाम से पूजें, सर्व सुखाकर तुम हो।।प्रभु.।।211।।

वाणी आप सर्व जगपूज्या, गौरवमयी बखानी।
प्रभु 'गरिष्ठगी' इसीलिये हो, तुम वाणी कल्याणी।।
प्रभु तुम नाम मंत्र को वंदत, आतम निधि को पाऊँ।
परमाल्हाद परमसुख अमृत, पीकर शिवपद पाऊँ।।212।।

चतुर्गती संसार नष्ट कर, आप 'विश्वमुट्' मानें।
सर्वविश्व के पालन कर्ता, सुरनर मुनिगण जानें।।प्रभु.।।213।।

सर्वविश्व की करो व्यवस्था, नाथ 'विश्वसृज्' तुम हो।
धर्मसृष्टि से आदि विधाता, मुक्तिप्रदाता तुम हो।।प्रभु.।।214।।

तीनलोक के ईश तुम्हीं, 'विश्वेट्' मुनी कहते हैं।
सुरपति नरपति फणपति तुमको, निजस्वामी गिनते हैं।।प्रभु.।।215।।

सब जग की रक्षा करते हो, अतः 'विश्वभुज्' तुमही।
सर्व जीवगण सुतवत् पालन, पोषण करते तुमही।।प्रभु.।।216।।

अखिल लोक के स्वामी तुमही, धर्मनीति सिखलाते।
अतः 'विश्वनायक' बन सबको, मोक्षमार्ग दिखलाते।।प्रभु.।।217।।

सब जग का विश्वास आप में, अतः आप 'विश्वासी'।
तुम आशिष पा सभी प्राणिगण, बने मुक्ति के वासी।।प्रभु.।।218।।

केवल ज्ञानरूप तुम आत्मा, अतः 'विश्वरूपात्मा'।
लोकपूर्ण के समय प्रदेशों, से त्रिलोकमय आत्मा।।प्रभु.।।219।।

विश्व-पांचविध भवको जीता, अतः 'विश्वजित्' तुम हो।
कर्म मल्ल यममल्ल विजेता, विश्वविजेता तुम हो।।प्रभु.।।220।।

'विजितांतक' अतंक-यम जीता, मृत्युंजयी तुम्हीं हो।
निज भक्तों को मृत्युमल्ल से, सदा छुड़ाते तुम हो।।प्रभु.।।221।।

'विभव' आपका भवविशेष है, शतइंद्रों से पूजित।
भव-संसार नष्टकर्ता तुम, सर्व गुणों से भूषित।।प्रभु.।।222।।

'विभय' सर्व कांती को जीता, सात भयों से छूटे।
तुम आश्रय लेकर भविप्राणी, सर्व भयों से छूटें।।प्रभु.।।223।।

'वीर' मोक्षलक्ष्मी के दाता, कर्मशत्रु के विजयी।
तुम पदपंकज भक्ति करें जो, बने कर्मरिपु विजयी।।प्रभु.।।224।।
विगत शोक प्रभु तुम 'विशोक' हो, भविजन शोक हरंता।
शं-सुख रूप आप की आत्मा, सौख्य अनंत धरंता।।प्रभु.।।225।।

–पद्धड़ी छंद–

प्रभु 'विजर' वृद्ध नहिं कभी आप, तुमही 'पुराणपूरुष' विख्यात।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।226।।
'अजरन्'[1] नहिं जीरण होंय आप। परमानंद क्रीड़ा करें आप।।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।227।।
प्रभु रागरहित हो तुम 'विराग', सब रागद्वेष को दिया त्याग।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।228।।
सत पापरहित हैं 'विरत' आप, भवसुखविरहित हो हरो पाप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।229।।
प्रभु तुम 'असंग' परिग्रह विहीन, मेरे दुख संकट करो क्षीण।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।230।।
सब विषयों से ही पृथग्भूत, अतएव 'विविक्त' तुम्हीं अनूप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।231।।
प्रभु विरहित मत्सर रागद्वेष, अतएव 'वीतमत्सर' जिनेश।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।232।।
प्रभु 'विनेयजनताबंधु' आप, सब शिष्यों को करते सनाथ।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।233।।
'विलीनाशेषकल्मष' जिनेश, कुछ पाप पंक नहिं रहे शेष।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।234।।
प्रभु मुक्तिरमा के साथ योग, अतएव तुम्हें कहते 'वियोग'।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।235।।

1. टीका की प्रति में अजरन् शब्द है। आदिपु0 में जरन् शब्द है।

सब योग-ध्यान जानो जिनेश, अतएव 'योगवित्' हो महेश।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।236।।
सब त्रिभुवन को जाना महान्, 'विद्वान्' तुम्हीं हो ज्ञानवान्।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।237।।
प्रभु धर्मसृष्टि को करो आप, अतएव 'विधाता' हरो पाप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।238।।
प्रभु तुम उत्तम चारित्रवान्, अतएव 'सुविधि' विज्ञानवान्।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।239।।
तुम बुद्धी केवलज्ञान रूप, अतएव 'सुधी' तुम हो अनूप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।240।।
तुम पूर्ण क्षमानिधि के निधान, हो 'क्षान्तिभाक्' जग में महान।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।241।।
प्रभु 'पृथिवीमूर्ति' तुम्हीं जिनेश, सर्वंसह मेरे हरो क्लेश।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।242।।
प्रभु 'शांतिभाक्' तुम शांतरूप, मुझको भी शांती दो अनूप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।243।।
'सलिलात्मक' प्रभु जल के समान, शीतलता करते हो महान।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।244।।
हो 'वायुमूर्ति' जगप्राणरूप, त्रिभुवन में व्यापी ज्ञानरूप।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।245।।
प्रभु आप 'असंगात्मा' महान, परिग्रहविहीन भविसुख निधान।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।246।।
प्रभु 'वह्निमूर्ति' अग्नी समान, कर्मेंधन भस्म किया महान।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।247।।
प्रभु तुम 'अधर्मधक्' पाप क्षीण, सब भस्म अधर्म किया प्रवीण।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।248।।

सब कर्मों का कर दिया होम, अतएव 'सुयज्वा[1]' शांत सौम्य।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।249।।

'यजमानात्मा' निज का स्वभाव, आराधन करते तज विभाव।
तुम नाममंत्र मैं जपूँ आज, मुझको दे दीजे मुक्तिराज।।250।।

–भुजंगप्रयात छंद–

प्रभू आप 'सुत्वा', निजानंद भरके।
निजात्मोदधी में, सदा स्नान करते।।
प्रभु नाम को मैं, नमूँ नित्य वंदूं।
जगत् के सभी दुःख, से शीघ्र छूटूँ।।251।।

प्रभो! आप 'सुत्राम-पूजित' कहाये, सभी इंद्र पूजें, तुम्हें शीश नायें।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।252।।

प्रभो! आप 'ऋत्विक्' किया यज्ञ भारी, जला ज्ञान अग्नी करम सर्व जारी।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।253।।

प्रभो! 'यज्ञपति' यज्ञ के ईश माने, करम का किया होम, जग सर्व जाने।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं,जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।254।।

प्रभो! 'याज्य' हो सर्व पूजा करे हैं, सभी इंद्र मिल आप अर्चा करे हैं।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।255।।

प्रभो! आप 'यज्ञांग' माने जगत् में, नहीं आप बिन पूज्य हो कोई जग में।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।256।।

प्रभो मृत्युजित् आप 'अमृत' कहाये, तृषा रोगहर सौख्य अमृत पिलायें।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।257।।

अगनिज्ञान में होम दीया अशुभ को, 'हवी' आप हो सौख्य दीया सभी को।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं,जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।258।।

प्रभो 'व्योममूर्ती' करमलेप हीना, सभी लोक को ज्ञान से व्याप्त कीना।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।259।।

1. टीका में 'यज्य' शब्द है।

'अमूर्तात्मा' वर्ण रस गंध हीना, सदा भक्त को सौख्य देते प्रवीणा।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।260।।

प्रभो! आप 'निर्लेप' सब लेप हीना, करम लेप नाशा निजानंद लीना।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।261।।

सदा आप 'निर्मल' सभी मल विहीना, करम पंक धोकर महासौख्य लीना।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।262।।

सदा एकसे आप रहते 'अचल' हो, अचलथान निर्वाण पाया अचल हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।263।।

प्रभो! 'सोममूर्ती' शशीवत् धवल हो, सदा शांत सुंदर प्रकाशी अमल हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।264।।

'सुसौम्यातमा' सौम्य छवि आपकी है, सभी के नयन चित्त को मोहती है।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।265।।

प्रभो! 'सूर्यमूर्ती' महाध्वांत नाशा, महातेज से सर्व जगको प्रकाशा।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।266।।

'महाप्रभ' तुम्हीं केवलज्ञान धारी, महातेज से भव्य अंधरे टारी।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।267।।

सभी मंत्र को जानते 'मंत्रविद्' हो, महामोक्ष का मंत्र भी दे रहे हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।268।।

महामंत्र करते प्रभो! 'मंत्रकृत' हो, तथा चार अनुयोग शास्त्रादि कृत हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।269।।

सभी मंत्र से युक्त 'मंत्री' तुम्हीं हो, महाध्यान मंत्रादि देते तुम्हीं हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।270।।

प्रभो! मंत्र सप्ता-क्षरी मूर्तिमय हो, अतः 'मंत्रमूर्ति' मुनी के विषय हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।271।।

अनंते पदारथ सभी जानते हो, महामोक्षगत हो 'अनंतग' तुम्हीं हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।272।।

'स्वतंत्रः' स्व-आत्मा वही तंत्र-तनु है, सभी कर्म बंधन-रहित स्वात्मवश हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।273।।
महाद्वादशांगी-मयी शास्त्रकृत् हो, अतः 'तंत्रकृत्' जैन सिद्धांतकृत् हो।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं,जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।274।।
प्रभो! 'स्वन्त' अन्तः-करण शोभना है, तुम्हारा हि सामीप्य सुखप्रद घना है।
प्रभू नाम को मैं नमूँ नित्य वंदूं, जगत् के सभी दुःख से शीघ्र छूटूँ।।275।।

–अडिल्ल छंद–

'कृतान्तान्त' प्रभु मृत्युराज को नाशिया।
अष्टकर्म को चूर मोक्षपद पा लिया।।
नाम मंत्र मैं जपूं सर्व दुख दूर हों।
निज में परमानंदामृत सुख पूर हो।।276।।
प्रभु 'कृतान्तकृत्' आगम कर्ता आप हो।
दिव्यध्वनि से भावग्रंथकृत् आप हो।।नाम.।।277।।
'कृती' पुण्यफलरूप कुशल विख्यात हो।
केवलज्ञान सौख्यमय हो विद्वान हो।।नाम.।।278।।
प्रभु 'कृतार्थ' निजके पुरुषार्थ सफल किये।
भक्ती से भविजन कृतार्थ भी हो गये।।नाम.।।279।।
प्रभु 'सत्कृत्य' इन्द्र सत्कार किया करें।
आप भली विध सर्वप्रजा पोषण करें।।नाम.।।280।।
प्रभु 'कृतकृत्य' आत्मकार्य सब कर चुके।
तुम पदभक्त स्वयं कृतकृत्य बनें सबे।।नाम.।।281।।
प्रभु 'कृतक्रतू' इन्द्रशत मिल पूजा करें।
तुम पूजा नहिं निष्फल निश्चित ही फले।।नाम.।।282।।
आप 'नित्य' हैं काल अनंतों भी रहें।
आपभक्त भी नित्य मोक्षपदवी लहें।।नाम.।।283।।

मृत्यु जीत 'मृत्युंजय' प्रभु तुम हो गये।
तुमपद भक्त स्वयं मृत्युंजय पद लहें।।
नाम मंत्र मैं जपूं सर्व दुख दूर हों।
निज में परमानंदामृत सुख पूर हो।।284।
आप 'अमृत्यु' मरण रहित हैं लोक में।
तुम पद आश्रय पाय भव्य मृत्यू हने।।नाम.।।285।।
'अमृतात्मा' अमृतवत् सुखदायि हो।
भव्य भजें निज आतम अमृतपायि हों।।नाम.।।286।।
नाथ! 'अमृतोद्भव' कहलाते आप हैं।
अमृत-शिवपद में उत्पन्न सनाथ हैं।।नाम.।।287।।
'ब्रह्मनिष्ठ' प्रभु शुद्ध आत्म में लीन हैं।
केवलज्ञान व मोक्ष निष्ठ भवहीन हैं।।नाम.।।288।।
'परंब्रह्म' उत्कृष्ट ब्रह्ममय आप हैं।
पंचम ज्ञानस्वरूप विश्व के तात हैं।।नाम.।।289।।
'ब्रह्मात्मा' तुम ज्ञानस्वरूपी आतमा।
केवलज्ञानगुणादि वृद्धिमय आतमा।।नाम.।।290।।
आप 'ब्रह्मसंभव' आत्मा से उद्भवे।
भक्त आपसे ज्ञानरूप हों उद्भवें।।नाम.।।291।।
'महाब्रह्मपति' पंचमज्ञानपती तुम्हीं।
गणधर इंद्रादिक के स्वामी हो तुम्हीं।।नाम.।।292।।
आप प्रभो! 'ब्रह्मेट्' ब्रह्म के ईश हो।
ज्ञान चरित अरु मुक्ती के परमेश हो।।नाम.।।293।।
'महाब्रह्मपदेश्वर' मुक्ती ईश्वरा।
गणधर मुनिगण सुरगण तुम वंदनपरा।।नाम.।।294।।
'सुप्रसन्न' प्रभु प्रहसितमुख शांतीछवी।
भविजन स्वर्ग मोक्ष, सुखदायक हो तुम्हीं।।नाम.।।295।।

आप 'प्रसन्नात्मा' अति निर्मल आतमा।
भवि कषाय मल धोय बने शुद्धातमा।।नाम.।।296।।
'ज्ञानधर्मदमप्रभू' आप विख्यात हैं।
केवलज्ञान क्षमादिधर्म तप नाथ हैं।।नाम.।।297।।
'प्रशमात्मा' क्रोधादि कषाय न आप में।
परम शांतप्रभु भक्त शांतिमय परिणमें।।नाम.।।298।।
आप 'प्रशान्तात्मा' प्रभु अतिशय शांत हो।
आप भक्त परिपूर्ण शांति को प्राप्त हों।।नाम.।।299।।
प्रभु 'पुराणपुरुषोत्तम' सबमें श्रेष्ठ हो।
सर्व शलाका पुरुषों में भी ज्येष्ठ हो।।नाम.।।300।।

–शंभु छंद–

प्रभु स्थविष्ठ से पुराण पुरु-षोत्तम तक नाम जपें जो भी।
वे शतक नाम धारें जग में, फिर जीवन्मुक्त बनें वे भी।।
मैं नामगोत्र विघ्नादि रहित, निज शुद्ध आत्मपद पा जाऊँ।
इसलिए आप पदपद्म भक्ति, करता हूँ फिर फिर शिर नाऊँ।।1।।

।।इति श्रीस्थविष्ठादिशतम्।।

(4)

–चौपाई–

'महाशोकध्वज' आप जिनेश। वृक्ष अशोक चिन्ह परमेश।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।301।।
नाथ! 'अशोक' शोक से हीन। आप भक्त हों शोक विहीन।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।302।।
आप 'क' नाम आत्म आधार। सब भक्तों को सुखदातार।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।303।।
स्वर्ग मोक्ष की सृष्टि करंत। 'स्रष्टा' नाम सुरेन्द्र यजंत।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।304।।

नाथ! 'पद्मविष्टर' तुम नाम। आसन स्वर्णकमल तुम स्वामि।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।305।।
प्रभु 'पद्मेश' आप विख्यात। लक्ष्मी के स्वामी हो नाथ।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।306।।
आप 'पद्मसंभूति' जिनेश। चरण कमल तल कमल हमेश।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।307।।
'पद्मनाभि' पंकजसम नाभि। वंदत मिटती सर्व उपाधि।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।308।।
नाथ! 'अनुत्तर' तुम सम अन्य। श्रेष्ठ नहीं प्रभु तुमही धन्य।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।309।।
'पद्मयोनि' मात का गर्भ। पद्माकृति से तुम उत्पत्ति।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।310।।
'जगद्योनि' धर्ममय जगत्। उसकी उत्पति कारण जिनप।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।311।।
'इत्य' आप की प्राप्ती हेतु। भविजन तप तपते बहुभेद।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।312।।
नाथ! 'स्तुत्य' इन्द्र मुनि आदि। सबकी स्तुति योग्य अबाधि।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।313।।
प्रभु आप 'स्तुतीश्वर' कहे। स्तुति के ईश्वर ही रहें।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।314।।
'स्तवनार्ह' स्तुति के योग्य। आप समान न अन्य मनोज्ञ।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।315।।
'हृषीकेश' इंद्रिय के ईश। विजितेन्द्रिय हो सर्व अधीश।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।316।।
प्रभो! आप 'जितजेय' अनूप। जीता मोह आदि अरि भूप।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।317।।

करने योग्य क्रियायें सर्व। पूर्ण किया 'कृतक्रिय' नामार्ह।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।318।।

बारह गण के स्वामी आप। अतः 'गणाधिप' हो निष्पाप।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म ।।319।।

सर्वजनों में तुमही श्रेष्ठ। अतः जगत में हो 'गणज्येष्ठ'।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।320।।

गणना योग्य आप ही 'गण्य[1]'। चौरासी लख गुण युत धन्य।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।321।।

पूर्ण पवित्र आप ही 'पुण्य'। सबको पावन करें सुपुण्य।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।322।।

सब गण शिवपथ में ले जाव। 'गणाग्रणी' प्रभु आप कहाव।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।323।।

ज्ञानाद्यनंत गुण की खान। नाथ 'गुणाकर' आप महान।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।324।।

लाख चुरासी गुण की वार्धि। 'गुणाम्भोधि' हरते भव व्याधि।।
आप नाम सब सुख की खान। वंदत मिलता आत्म निधान।।325।।

–राग भरतरी–

नाम मंत्र मैं नित जपूँ, हरो सकल भवव्याधि।
स्वपर भेद विज्ञानयुत, दीजे अंत समाधि।।
नाम मंत्र मैं नित जपूँ.....

नाथ! 'गुणज्ञ' कहावते, गुणमणि ज्ञाता आप।
सर्वदोष मुझ हान के, करो शीघ्र निष्पाप।।
नाम मंत्र मैं नित जपूँ, हरो सकल भवव्याधि।
स्वपर भेद विज्ञानयुत, दीजे अंत समाधि।।326।।

1. टीका सहित प्रति में 'गुण्य' पाठ है।

'गुणनायक' चौरासी लख, गुणमणि के हो नाथ।
रोग शोक दुखनाश कर, गुण से करो सनाथ।।
नाम मंत्र मैं नित जपूँ, हरो सकल भवव्याधि।
स्वपर भेद विज्ञानयुत, दीजे अंत समाधि।।327।।

सत्त्व आदि गुण आदरा, 'गुणादरी' तुम नाम।
क्रोध मोह सब नाशिये, झुक झुक करूँ प्रणाम।।नाम.।।328।।

रजतम आदि विभावगुण, नाश किया प्रभु आप।
अतः 'गुणोच्छेदी' भये, करो मुझे निष्पाप।।नाम.।।329।।

वैभाविक गुण हीन हो, 'निर्गुण' कहें मुनीश।
या निश्चित ज्ञानादि गुण, धरते निर्गुण ईश।।नाम.।।330।।

नाथ! 'पुण्यगी' पुण्यमय, पावनवाणी आप।
मुझ वाणी पावन करो, हरो सकल भव ताप।।नाम.।।331।।

गुणयुत और प्रधान हो, अतः नाम 'गुण' आप।
भव्य आपको ही गुने, हरो सकल यम ताप।।नाम.।।332।।

प्रभु 'शरण्य' हो जगत में, शरणागत प्रतिपाल।
सब दुख मथन करो सदा, नमूँ नमूँ नत भाल।।नाम.।।333।।

'पुण्यवाक्' प्रभु तुम वचन, भरें पुण्य भण्डार।
आतम निधि को देय के, करें मृत्यु संहार।।नाम.।।334।।

'पूत' आप पावन परम, भक्तन करो पवित्र।
अंतर आत्म उपाय से, लहूँ परमपद शीघ्र।।नाम.।।335।।

प्रभु 'वरेण्य' मुक्तीरमा, वरण किया स्वयमेव।
सबमें श्रेष्ठ तुम्हीं कहे, करो सकल दुख छेव।।नाम.।।336।।

नाथ! 'पुण्यनायक' तुम्हीं, सकल पुण्य के ईश।
पुण्यसंपदा देउ मुझ, नमूँ नमूँ नत शीश।।नाम.।।337।।

प्रभु 'अगण्य' गणना नहीं, माप रहित गुण आप।
मेरे अनवधि गुण मुझे, देय हरो संताप।।नाम.।।338।।

नाथ! 'पुण्यधी' पावना, बुद्धी आपकी शुद्ध।
मुझ मन पावन कीजिये, होय आतमा शुद्ध।।नाम.।।339।।
'गुण्य' सर्वगण हित किया, गुण अनंत युत आप।
सर्वगुणों से पूर्ण कर, हरो दोष दुख पाप।।नाम.।।340।।
प्रभो! 'पुण्यकृत्' आपही, किया पुण्य हरपाप।
सब जन मन पावन किया, हो पवित्र निष्पाप।।नाम.।।341।।
नाथ! 'पुण्यशासन' यहाँ, तुम शासन-मत शुद्ध।
आतम अनुशासन करूँ, देवो ऐसी बुद्धि।।नाम.।।342।।
'धर्माराम' तुम्हीं प्रभो! धर्मोद्यान विशाल।
छाया फल दे स्वर्ग शिव, हरिये ताप दयालु।।नाम.।।343।।
आप प्रभो! 'गुणग्राम' हैं, मूलोत्तर गुण युक्त।
इंद्रियगाँव उजाड़के, आप हुये जग मुक्त।।नाम.।।344।।
'पुण्यापुण्यनिरोधका', शुद्ध आत्म में लीन।
पुण्य पाप को रोक के, भये मुक्ति अधीन।।नाम.।।345।।
'पापापेत' तुम्हीं प्रभो! पाप रहित निष्पाप।
मेरे सब संकट हरो, पुण्य भरो हत पाप।।नाम.।।346।।
नाथ! 'विपापात्मा' कहे, पाप हीन अतिशुद्ध।
मेरे सब अघ क्षय करो, होऊँ सिद्ध विशुद्ध।।नाम.।।347।।
नाथ! 'विपाप्मा' कर्म अघ, चूर किया भगवान्।
तुम भक्ती से भव्यजन, बने सकल धनवान।।नाम.।।348।।
द्रव्य भाव नोकर्ममल, कल्मष धोकर शुद्ध।
प्रभो! 'वीतकल्मष' तुम्हीं मुझे करो झट शुद्ध।।नाम.।।349।।
प्रभो! आप 'निर्द्वंद्व' हैं, द्वंद्व-कलह से मुक्त।
सर्व परिग्रह हीन हैं, करों हमें भव मुक्त।।नाम.।350।।

राग-वंदो दिगम्बर गुरु.....

प्रभु आप 'निर्मद' आठ विध, मद रहित पूज्य महान।
तुम भक्त अतिशय स्वाभिमानी, आत्म गौरववान।।
तुम नाम की माला करूं मैं स्वात्म संपति हेतु।
बस पूरिये इक आश मेरी, आप ही भव सेतु।।351।।
प्रभु 'शांत' क्रोधादी कषायें, नष्ट कर दी आप।
तुम पद कमल की भक्ति भी, करती भविक मन शांत।।तुम.।।352।।
'निर्मोह' प्रभु सब मोह अरु, अज्ञान से भी दूर।
तुम भक्त का चारित्र दर्शन, मोह करते दूर।।तुम.।।353।।
प्रभु आप 'निरुपद्रव' उपद्रव, उपसरग से हीन।
तुम भक्त भी जड़मूल से करते उपद्रव क्षीण।।तुम.।।354।।
प्रभु दिव्यचक्षु नेत्रस्पंदन रहित विख्यात।
इससे कहें मुनि 'निर्निमेष' सुपाय ज्ञानविकास।।तुम.।।355।।
प्रभु 'निराहार' न आपको है, कभी कवलाहार।
तुम भक्त भी आहार विरहित, होंय निर्नीहार।।तुम.।।356।।
'निष्क्रिय' प्रभो! सामायिकादि, क्रियाओं से शून्य।
संसार की सबही क्रियाओं, से रहित सुखपूर्ण।।तुम.।।357।।
नाथ 'निरुपप्लव' विघन, बाधारहित भगवान।
तुम पाद अर्चन से सभी, निर्विघ्न होते काम।।तुम.।।358।।
प्रभु 'निष्कलंक' कलंकअप-वादादि अघ से हीन।
संपूर्ण कर्मकलंक नाशा, विश्वज्ञान प्रवीण।।तुम.।।359।।
प्रभु 'निरस्तैना' सर्व एनस-पाप से हो दूर।
तुम भक्त भी मोहारि अघ, नाशन करें बन शूर।।तुम.।।360।।
'निर्धूतआगस्' आप हैं, अपराध अघ से हीन।
हे नाथ मुझ अपराध नाशो, करो ज्ञान अधीन।।तुम.।।361।।

प्रभु 'निरास्रव' संपूर्ण आस्रव, रोक संवररूप।
मुझ पाप आस्रव नाशिये, हो शुद्ध आतमरूप।।तुम.।।362।।
हे नाथ! आप 'विशाल' अनुपम, शांति देते नित्य।
सबसे महान-विशाल मानें, नमूँ मैं धर प्रीत्य।।तुम.।।363।।
हे 'विपुलज्योति' समस्त लोका-लोकव्यापक ज्ञान।
तुम ज्ञानज्योति से हनें भवि, मोह ध्वांत महान्।।तुम.।।364।।
प्रभु 'अतुल' तुलनारहित जग में, मुक्तिलक्ष्मीनाथ।
नहिं तोल सकते गुण तुम्हारे, सर्व गण के नाथ।।तुम.।।365।।
हे नाथ! आप 'अचिन्त्यवैभव', विभव त्रिभुवन मान्य।
मन से न सुरपति योगिगण भी, सोच सकते साम्य।।तुम.।।366।।
भगवन्! 'सुसंवृत' आप सम्यक, पूर्ण संवर युक्त।
तुम पदकमल की भक्ति से हों, भव्य आस्रव मुक्त।।तुम.।।367।।
प्रभु 'सुगुप्तात्मा' आप आत्मा, कर्मअरि से गुप्त।
तुम भक्त भी मन वचन कायिक, गुप्ति से हों युक्त।।तुम.।।368।।
प्रभु 'सुबुध[1]' अच्छी तरह त्रिभुवन, जानते हैं आप।
मुझको निजातम तत्त्व का, सुखबोध देवो आज।।तुम.।।369।।
हे नाथ! 'सुनयतत्त्ववित्', सापेक्ष नय का मर्म।
जानों तुम्हीं बतला दिया, जिन अनेकांत सुधर्म।।तुम.।।370।।
प्रभु 'एकविद्य' सुएक केवल-ज्ञान विद्या युक्त।
मतिश्रुत अवधि मनपर्ययी, चउज्ञान विद्या मुक्त।।तुम.।।371।।
प्रभु 'महाविद्य' महान् केवलज्ञान विद्याधार।
अठरा महाभाषा लघु तुम, सात सौ ध्वनि कार।।तुम.।।372।।
'मुनि' आप त्रिभुवन चराचर को, जानते प्रत्यक्ष।
मैं आपका वंदन करूँ हो, स्वात्मज्ञान प्रत्यक्ष।।तुम.।।373।।
प्रभु 'परिवृढ' सब गुणों का, वर्धन किया जिनराज।
तुम वंदना से सर्व मेरे, गुण प्रगट हो आज।।तुम.।।374।।

1. सुभुत् या सुभृत् पाठ भी है आदि पु. में।

प्रभु 'पती' प्राणीवर्ग को, संसार दुख से काढ़।
रक्षा करो त्रिभुवनपती सुर, नमें रुचिधर गाढ़।।
तुम नाम की माला करूं मैं स्वात्म संपति हेतु।
बस पूरिये इक आश मेरी, आप ही भव सेतु।।375।।

-वसंततिलका छंद-

कैवल्यज्ञानमय बुद्धि धरंत 'धीश'।
मेरे सुज्ञानमय ज्योति करो मुनीश।।
हे नाथ! नाममय मंत्र सदा जपूँ मैं।
स्वात्मा पियूष रस कंद सदा भजूँ मैं।।376।।
'विद्यानिधी' स्वपर शास्त्र सुज्ञानरूपा।
भंडार आप उसके निधि है अनूपा।।हे नाथ.।।377।।
त्रैलोक्य की सकल वस्तु प्रतक्ष जानो।
'साक्षी' कहें सुरपती प्रभु ज्ञान भानू।।हे नाथ.।।378।।
मोक्षैक मार्ग प्रकटी करते 'विनेता'।
पादाब्ज में नित नमूँ मुझ विघ्न नाशो।।हे नाथ.।।379।।
मृत्यू विनाश 'विहितांतक' नाम धारा।
मेरे समस्त दुख रोष मिटाय दीजे।।हे नाथ.।।380।।
रक्षा करो दुर्गती दुख से बचाते।
साधू 'पिता' कह रहे सुख के जनक हो।।हे नाथ.।।381।।
त्रैलोक्य के गुरु कहें सबके सुत्राता।
इससे 'पितामह' तुम्हें कहते गणीशा।।हे नाथ.।।382।।
रक्षा करो नित भवोदधि दुःख से ही।
'पाता' कहें सुरपती मुझको उबारो।।हे नाथ.।।383।।
आत्मा पवित्र कर ली निजकी तुम्हीं ने।
इससे 'पवित्र' मुझको भि पवित्र कर दो।।हे नाथ.।।384।।

संपूर्ण भव्य जन को सुपवित्र करते।
'पावन' कहें मुनि तुम्हें मुझ पाप नाशो।।हे नाथ.।।385।।
संपूर्ण भव्य तप कर प्रभू आप जैसा।
होना चहें 'गति' अतः सबको शरण भी।।हे नाथ.।।386।।
'त्राता' समस्त जन रक्षक भी तुम्हीं हो।
पादाब्ज आश्रय लिया अतएव मैंने।।हे नाथ.।।387।।
हो वैद्य आप भव रोग विनाश कर्ता।
इससे 'भिषग्वर' तुम्हीं मुझ व्याधि नाशो।।हे नाथ.।।388।।
हो 'वर्य' आप जग में अतिश्रेष्ठ माने।
मुक्तीरमा तुम वरण अभिलाष धारे।।हे नाथ.।।389।।
इच्छानुकूल सब वस्तु प्रदान करते।
इससे 'वरद' सुरग मोक्ष तुम्हीं प्रदाता।।हे नाथ.।।390।।
ज्ञानादि से 'परम' आप त्रिलोक लक्ष्मी।
धारें अतः जन सभी तुम पास आते।।हे नाथ.।।391।।
आत्मा व अन्य जन को भि पवित्र करते।
इससे 'पुमान्' तुम ही जग के हितैषी।।हे नाथ.।।392।।
हे नाथ! आप 'कवि' द्वादश अंग वर्णें।
सद्धर्म के कथन में अतिशायि पटुता।।हे नाथ.।।393।।
ना आदि नांत अतएव 'पुराण पुरुष'।
आत्मा पुराण पुरुषा प्रभु आपकी है।।हे नाथ.।।394।।
ज्ञानादि से अतिशयी प्रभु वृद्ध ही हो।
इस हेतु नाम तुम 'वर्षीयान्' पाया।।हे नाथ.।।395।।
सुश्रेष्ठ हो 'ऋषभ' नाम धरा तुम्हीं ने।
इंद्रादि वंद्य सुरपूजित सौख्य देवो।।हे नाथ.।।396।।
हे देव! आप 'पुरु' है युग के विधाता।
संपूर्ण द्वादश गणों मधि मुख्य ही हो।।हे नाथ.।।397।।

उत्पत्ति है प्रतिष्ठा गुण की तुम्हीं से।
इससे तुम्हीं 'प्रतिष्ठाप्रसवादि' नामा।।
हे नाथ! नाममय मंत्र सदा जपूँ मैं।
स्वात्मा पियूष रस कंद सदा भजूँ मैं।।398।।
संपूर्ण कार्य हित कारण 'हेतु' आप।
संपूर्ण ज्ञानमय नाथ! सुज्ञानदाता।।हे नाथ.।।399।।
हो एकमात्र गुरु सर्व त्रिलोक में भी।
अतएव आप 'भुवनैकपितामहा' हो।।हे नाथ.।।400।।

प्रभु महाशोकध्वज आदि नाम, सौ धारा सुरपति पूजित हो।
सौ इंद्रों से वंदित गणधर, मुनिगण से वंदित संस्तुत हो।।
प्रभु सात परम स्थान हेतु मैं, नित प्रति तुम गुण को गाऊँ।
जब तक नहिं मुक्ति मिले मुझको, तुमपद में ही मैं रम जाऊँ।।1।।

।।इति श्रीमहाशोकध्वजादिशतम्।।

(5)

–विष्णुपद छंद–

आप नाम 'श्री वृक्षलक्षणा', इंद्र सदा गावें।
दिव्य अशोक वृक्ष इक योजन, मणिमय दर्शावें।।
नाममंत्र को मैं नित वंदूं, भक्ती मन धरके।
पाऊँ निज गुण संपत्ती मैं, स्वपर भेद करके।।401।।
अनंतलक्ष्मी प्रिया साथ में, आलिंगन करते।
सूक्ष्मरूप होने से भगवन् ,'श्लक्ष्ण' नाम धरते।।नाम.।।402।।
अष्ट महाव्याकरण कुशल हो, सर्वशास्त्रकर्ता।
प्रभू आप 'लक्षण्य' नामधर, सबलक्षण भर्ता।।नाम.।।403।।
'शुभलक्षण' श्रीवृक्ष शंख, पंकज स्वस्तिक आदी।
प्रातिहार्य मंगल सुद्रव्य शुभ, लक्षण सौ अठ भी।।नाम.।।404।।

प्रभु 'निरक्ष' इंद्रिय से विरहित, सौख्य अतीन्द्रिय हैं।
इंद्रिय निग्रहकर जो ध्याते, वे निज सुखमय हैं।।नाम.।।405।।
प्रभु 'पुण्डरीकाक्ष' कहाये, नेत्र कमलसम हैं।
नासादृष्टि सौम्य छवि लखते, नेत्र प्रफुल्लित हैं।।नाम.।।406।।
'पुष्कल' आत्मगुणों से भगवन्! तुम परिपुष्ट हुये।
भक्तजनों का पोषण करते, जो तुम शरण भये।।नाम।।407।।
प्रभु 'पुष्करेक्षण' पंकज दल सदृश नेत्र लम्बे।
निजमन कमल खिलाने हेतू भवि तुम अवलंबे।।नाम.।।408।।
प्रभो! 'सिद्धिदा' स्वात्मलब्धि, मुक्ती के दायक हो।
भक्तों की सब कार्यसिद्धि हित, तुमही लायक हो।।नाम.।।409।।
प्रभो! 'सिद्धसंकल्प' सर्व, संकल्प सिद्ध कीना।
भक्तों के भी सकल मनोरथ, पूरे कर दीना।।नाम.।।410।।
'सिद्धात्मा' प्रभु तुम आत्मा ने, सिद्ध अवस्था ली।
सिद्ध शिला पर आप विराजे, अनवधि गुणशाली।।नाम.।।411।।
नाम! 'सिद्धसाधन' शिवसाधन, रत्नत्रय धारा।
जिनने आप चरण को पूजा, उन्हें शीघ्र तारा।।नाम.।।412।।
ज्ञेयवस्तु सब जान लिया है, नहीं शेष कुछ भी।
'बुद्धबोध्य' अतएव कहाये, लिया सर्वसुख भी।।नाम.।।413।।
रत्नत्रय गुण विभव प्रशंसित, सब जग में प्रभु का।
'महाबोधि' अतएव आप ही, हरो सर्व विपदा।।नाम.।।414।।
परम श्रेष्ठ अतिशायी पूजा, ज्ञान लहा तुमने।
सदा गुणों से बढ़ते रहते, 'वर्द्धमान' जग में।।नाम.।।415।।
बड़ी-बड़ी ऋद्धी के धारक, आप 'महर्द्धिक' हो।
गणधर मुनिगण वंदित चरणा, आप सौख्यप्रद हो।।नाम.।।416।।
वेद-चार अनुयोग ज्ञान के, अंग-उपाय तुम्हीं।
अतः आप 'वेदांग' ज्ञान–प्राप्ती के हेतु तुम्हीं।।नाम.।।417।।

वेद-आत्मविद्या शरीर से भिन्न आतमा है।
इसके ज्ञाता भिन्न किया तनु, अतः 'वेदविद्' हैं।।
नाममंत्र को मैं नित वंदूं, भक्ती मन धरके।
पाऊँ निज गुण संपत्ती मैं, स्वपर भेद करके।।418।।
'वेद्य' आप ऋषिगण के द्वारा, ज्ञान योग्य माने।
स्वसंवेद्य ज्ञान वो पाते, जो पूजन ठाने।।नाम.।।419।।
'जातरूप' तुम जन्में जैसे, रूप दिगंबर है।
प्रकृतरूप निर्दोष आपका, भविजन सुखप्रद है।।नाम.।।420।।
विद्वानों में श्रेष्ठ 'विदांवर', आप पूर्णज्ञानी।
तुमपद पंकज भक्त शीघ्र ही, वरते शिवरानी।।नाम.।।421।।
'वेदवेद्य' प्रभु आगम से तुम, जानन योग्य कहे।
केवलज्ञान से हि या प्रभु, जानन योग्य रहे।।नाम.।।422।।
'स्वसंवेद्य' प्रभु स्वयं सुअनुभव, गम्य आप ही है।
स्वयं स्वयं का अनुभव करके, हुये केवली हैं।।नाम.।।423।।
नाथ 'विवेद' वेदत्रय विरहित, स्त्री पुरुषादी।
हो विशिष्ट विज्ञानी भगवन्! आतम सुखस्वादी।।नाम.।।424।।
'वदताम्बर' प्रभु वक्तागण में, सर्वश्रेष्ठ तुम ही।
सब भाषामय दिव्यध्वनी से, उपदेशा तुम ही।।।।नाम.।।425।।

–दोहा–

नाथ! 'अनादिनिधन' तुम्हीं, आदि अंत से हीन।
अतिशय लक्ष्मीयुत तुम्हीं, वंदूं भक्ति अधीन।।426।।
'व्यक्त' आप सुज्ञान से, प्रगट सर्वथा मान्य।
सर्व अर्थ प्रकटित किया, नमत मिले धन धान्य।।427।।
'व्यक्तवाक्' प्रभु तुम वचन, सर्व प्राणि को गम्य।
सभी अर्थ स्पष्ट हो, नमत जन्म हो धन्य।।428।।

प्रभो! 'व्यक्तशासन' तुम्हीं, त्रिभुवन में स्पष्ट।
सब विरोधविरहित सुमत, नमूँ नमूँ अति इष्ट।।429।।

प्रभु 'युगादिकृत्' कर्मभू, युग के कर्ता आप।
जीवन कला सिखाय दी, नमूँ हरो मुझ पाप।।430।।

'युगाधार' युग की सभी, किया व्यवस्था आप।
राजनीति अरु धर्मद्वय, किया नमूँ नित आप।।431।।

प्रभु 'युगादि' तुम कर्मभू, युग का कर प्रारंभ।
असि मषि आदि क्रिया कहीं, नमूँ तुम्हें तज दंभ।।432।।

'जगदादिज' युग के प्रथम, आप हुये उत्पन्न।
तीर्थंकर युग के प्रथम, वंदूं चित्त प्रसन्न।।433।।

निज प्रभाव से इंद्रगण, को भी कर अतिक्रांत।
प्रभु 'अतीन्द्रि' तुमको नमूं मिले सौख्य निर्भांत।।434।।

नाथ! 'अतीन्द्रिय' ज्ञानसुख, आप अतीन्द्रिय मान्य।
इंद्रिय के गोचर नहीं, नमूं मिले सुख साम्य।।435।।

'धीन्द्र' पूर्ण कैवल्यमय, बुद्धी के हो ईश।
शुद्ध बुद्धि मेरी करो, नमूं नमाकर शीश।।436।।

परम मोक्ष ऐश्वर्य का, अनुभव करते आप।
प्रभु 'महेन्द्र' तुमको नमूँ, हरो सकल संताप।।437।।

सूक्ष्म अंतरित दूरके, अतीन्द्रिय सुपदार्थ।
एक समय में देखते, 'अतीन्द्रियार्थदृक्' नाथ।।438।।

इंद्रिय विरहित आप हैं, आत्म सौख्य परिपूर्ण।
अतः 'अनिंद्रिय' मुनि कहे, नमत सर्व दुखचूर्ण।।439।।

अहमिंद्रों से पूज्य प्रभु, 'अहमिन्द्रार्च्य' महान।
अहं अहं कह संपदा, मिले नमत ही आन।।440।।

बड़े-बड़े सब इंद्र से, पूजित आप जिनेश।
सभी 'महेन्द्रमहित' कहें, नमूँ हरो भवक्लेश।।441।।

चउविध पूजा से महित[1], त्रिभुवन पूज्य 'महान्'।
नमूँ सदा मैं भाव से, करो स्वात्म धनवान्।।442।।

सबसे ऊँचे उठ चुके, 'उद्भव' जगत्प्रसिद्ध।
जन्म श्रेष्ठ जग में धरा, वंदत करो समृद्ध।।443।।

धर्मसृष्टि के बीजप्रभु, 'कारण' आप प्रसिद्ध।
भविजन मुक्ती हेतु हो, नमत कार्य सब सिद्ध।।444।।

युग कि आदि में सृष्टि के, 'कर्ता' आप जिनेश।
असि मषि आदिक षट् क्रिया, उपदेशी परमेश।।445।।

भवसमुद्र के पार को, पहुँचे 'पारग' नाथ।
मुझको पार उतारिये, नमूँ नमूँ नत माथ।।446।।

भव-सागर सुपांचविध, इससे तारणहार।
'भवतारग' तुमको नमूं, भरो सौख्य भण्डार।।447।।

प्रभु 'अगह्य' नहिं अन्य के, अवगाहन के योग्य।
तुम गुणपार न पा सकें, वंदत सौख्य मनोज्ञ।।448।।

योगिगम्य प्रभु अति गहन आप अलक्ष्य स्वरूप।
नमूँ 'गहन' अतिशय कठिन आप रूप चिद्रूप।।449।।

'गुह्य' योगि गोचर तुम्हीं, सर्वजनों से गुप्त।
नमूँ नमूँ मुझ मन वसो, करो मोह अरि सुप्त।।450।।

–उपजाति छंद–

'परार्ध्य' स्वामी सबमें प्रधाना।
उत्कृष्ट ऋद्धी सुख के निधाना।।
वंदूं तुम्हें नाम सुमंत्र गाऊँ।
स्वात्मैक सिद्धी प्रभु शीघ्र पाऊँ।।451।।

हे नाथ! 'परमेश्वर' आप ही हैं।
उत्कृष्ट मुक्ती श्रीनाथ ही हैं।।वंदूं.।।452।।

1. पूजित।

अनंत ऋद्धी प्रभु आप में हैं।
अतः 'अनंतर्द्धि' प्रभो! तुम्हीं हो।।वंदूं.।।453।।
अमेय ऋद्धी मर्याद हीना।
अतः 'अमेयर्द्धि' प्रभो! तुम्हीं हो।।वंदूं.।।454।।
अचिन्त्य ऋद्धि नहिं सोच सकते।
अतः 'अचिन्त्यर्द्धि' प्रभो! तुम्हीं हो।।वंदूं.।।455।।
'समग्रधी' ज्ञेयप्रमाण बुद्धी।
कैवल्यज्ञानी प्रभु आप ही हो।।वंदूं.।।456।।
हे नाथ! तुम मुख्य सभी जनों में।
हो 'प्राग्र्य' इससे मैं नित्य वंदूँ।।वंदूं.।।457।।
प्रत्येक मंगल शुभ कार्य में ही।
तुम्हें स्मरंते प्रभु 'प्राग्रहर' हो।।वंदूं.।।458।।
लोकाग्र के सम्मुख हो रहे हो।
'अभ्यग्र' इससे मुनिनाथ कहते।।वंदूं.।।459।।
'प्रत्यग्र' नूतन संपूर्ण जन में।
प्रभो! विलक्षण तुम ही कहाते।।वंदूं.।।460।।
स्वामी सभी के तुम 'अग्र्य' मानें।
मैंने शरण ली अतएव आके।।वंदूं.।।461।।
संपूर्ण जन में प्रभु अग्रसर हो।
अतएव 'अग्रिम' कहते सुरेन्द्रा।।वंदूं.।।462।।
हो ज्येष्ठ सबमें 'अग्रज' कहाते।
त्रैलोक्य में नाथ तुम्हीं बड़े हो।।वंदूं.।।463।।
'महातपा' घोर सुतप किया है।
बारह तपों को मुझको भि देवो।।वंदूं.।।465।।
तेजोमयी पुण्य प्रभो! धरे हो।
'महासुतेजा' तुम तेज फैला।।वंदूं.।।465।।

प्रभो! 'महोदर्क' तुम्हें कहे हैं।
महान तप का फल श्रेष्ठ पाया।।
वंदूं तुम्हें नाम सुमंत्र गाऊँ।
स्वात्मैक सिद्धी प्रभु शीघ्र पाऊँ।।466।।
ऐश्वर्य भारी प्रभु आपका है।
अतः 'महोदय' जगमें तुम्हीं हो।।वंदूं.।।467।।
कीर्ती चहूँदिश प्रभु की सुफैली।
'महायशा' नाम कहा इसी से।।वंदूं.।।468।।
प्रभो! 'महाधाम' तुम्हीं कहाते।
विशाल ज्ञानी सुप्रताप धारी।।वंदूं.।।469।।
प्रभो! 'महासत्त्व' अपार शक्ती।
हे नाथ! मुझको निज शक्ति देवो।।वंदूं.।।470।।
'महाधृती' धैर्य असीम धारी।
आपत्ति में धैर्य रहे मुझे भी।।वंदूं.।।471।।
प्रभो! 'महाधैर्य' त्रिलोक में भी।
क्षोभादि भय से नहिं आकुली थे।।वंदूं.।।472।।
प्रभो! 'महावीर्य' अनंतशक्ती।
महान तेजोबल वीर्य शाली।।वंदूं.।।473।।
प्रभो! 'महासंपत्' सर्वसंपत्।
समोसरण में तुम पास शोभे।।वंदूं.।।474।।
प्रभो! 'महाबल' तनु शक्ति भारी।
ऐसी जगत् में नहिं अन्य के हो।।वंदूं.।।475।।

–शिखरणी छंद–

'महाशक्ती' धारो, त्रिभुवन गुरू आप सच में।
महा उत्साही थे, बहुविध तपा आप तप भी।।

प्रभू की नामावलि, नितप्रति जपूँ भावमन से।
मिले ऐसी शक्ती, पृथक कर लूँ आत्म तन से।।476।।

'महाज्योती' स्वामी, अद्भूत परंज्ञानमय हो।
मुझे ज्ञानज्योति, झटिति प्रभू दो पूर्ण सुख हो।।प्रभू.।।477।।

'महाभूती' स्वामी, विभव अतिशायी जगत में
प्रभो राजें सिंहा–सन मणिमय पे अधर ही।।प्रभू.।।478।।

प्रभु की जो शोभा, 'महाद्युति' नामा धरत है।
नहीं ऐसी कांती, रतनमणि में भी दिखत है।।प्रभू.।।479।।

महाबुद्धी पूर्णा, 'महामति' का नाम धरती।
हमें भी दे दीजे, सुमति भगवन्! होय सुगती।।प्रभू.।।480।।

'महानीती' धारो, सकल जन का न्याय करते।
महा दुष्कर्मों से, अलग करके सौख्य भरते।।प्रभू.।।481।।

'महाक्षान्ती' स्वामी, परम करुणा भव्य जन पे।
निकालो दुःखों से, करम अरि को माफ करते।।प्रभू.।।482।।

'महादय' हो स्वामी, सकल भवि प्राणी पर दया।
किया शिष्यों से भी, सतत पलवायी अहिंसा।।प्रभू.।।483।।

महाविद्वान् भगवान्, शिवप्रद 'महाप्राज्ञ' तुम हो।
मुझे दीजे बुद्धी, भवदधि तरूँ युक्ति करके।।प्रभू.।।484।।

महाभागी स्वामी, सुखकर 'महाभाग' तुम हो।
महा पूजा पायी, सुरपति किया भक्ति रुचि से।।प्रभू.।।485।।

निजानंदात्मा हो, सुखमय 'महानंद' प्रभु हो।
मुझे दीजे स्वामी, सकल सुखकर मोक्षपदवी।।प्रभू.।।486।।

'महाकवि' हे स्वामिन्! सकल सुखदायी वचन हैं।
प्रभो दीजे शक्ती, मुझ वचन सिद्धी प्रगट हो।।प्रभू.।।487।

'महामह' हे स्वामिन्! सुरपति करें आप अर्चा।
महा तेजस्वी हो, अखिल जनता सौख्य भरता।।

प्रभू की नामावलि, नितप्रति जपूँ भावमन से।
मिले ऐसी शक्ती, पृथक कर लूँ आत्म तन से।।488।।

'महाकीर्ती' स्वामी, सुयश तुम व्यापा भुवन में।
प्रभू पादाम्बुज को, सतत प्रणमूँ स्वात्मनिधि दो।।प्रभू.।।489।।

'महाकान्ती' धारो, अतुल छवि है आप तनु की।
सभी आधी व्याधी, हरण करके स्वस्थ कर दो।।प्रभू.।।490।।

प्रभो! ऊँचे देही, 'महावपु' तुम ही चरम हो।
मिटा दो बाधायें, विघन हरता आज जग में।।प्रभू.।।491।।

अहिंसा जीवों की, अभयद 'महादान' करते।
हमारी रक्षा भी, झटिति प्रभु कीजे जगत् से।।प्रभू.।।492।।

प्रभो! केवलज्ञानी, युगपत् 'महाज्ञान' गुण से।
सभी लोकालोकं, विशद त्रयकालिक लखत हो।।प्रभू.।।493।।

प्रभो! एकाग्री हो, शिवप्रद 'महायोग' गुण से।
स्वयं में ही साधा, निजसुख महाध्यान बल से।।प्रभू.।।494।।

गुणों की खानी हो, अतिशय 'महागुण' मुनि कहें।
गुणों को दे दीजे, सकल मुझ दोषादि हन के।।प्रभू.।।495।।

सुमेरु पे तेरा, न्हवन करते इंद्रगण भी।
महापूजा पायी, 'महामहपति' आप जग में।।प्रभू.।।496।।

सुरेंद्रो के द्वारा, प्रभु 'प्राप्तमहाकल्याणपंचक'।
गरभ जन्मादी में, उत्सव किया देवगण ने।।प्रभू.।।497।।

सभी के स्वामी हो, अतिशय 'महाप्रभु' भुवन में।
निवारो मोहारी, बहुत दुख देता जु मुझको।।प्रभू.।।498।।

'महाप्रातीहार्या–धिश' चमर छत्रादिक लहा।
शतेन्द्रों से पूजित, त्रिभुवन विभव आप चरणों।।प्रभू.।।499।।

'महेश्वर' हो स्वामी, सुरपति अधीश्वर तुमहि हो।
सुभक्ती से वंदूँ, झटिति शिव लक्ष्मी वरद[1] हो।।प्रभू.।।500।।

1. वरदान देने वाले।

–शंभु छंद–

श्री वृक्षलक्षणादिक सौ ये, तुम नाममंत्र अतिशयकारी।
मैं वंदूं ध्याऊँ भक्ति करूँ, पा जाऊँ निज संपति सारी।।
बहिरात्म अवस्था छोड़ नाथ! अंतर आतम शुद्धात्म बनूँ।
तुम भक्ति युक्ति से शक्ति पाय, मुक्तीपद पा जिनराज बनूँ।।1।।

।।इति श्रीवृक्षलक्षणादिशतम्।।

(6)

–सोरठा–

'महामुनि' प्रभु आप, मुनियों में उत्तम कहे।
नाममंत्र तुम नाथ! वंदत ही सुखसंपदा।।501।।

मुनि हो मौन धरंत, प्रभु 'महामौनी' तुम्हीं।
नाम मंत्र वंदंत, रोग शोक संकट टले।।502।।

धर्म शुक्लद्वय ध्यान, धार 'महाध्यानी'[1] हुये।
नाममंत्र का ध्यान, करते ही सब सुख मिले।।503।।

पूर्ण जितेन्द्रिय आप, नाम 'महादम' धारते।
नाममंत्र तुम नाथ! वंदत आतम निधि मिले।।504।।

श्रेष्ठ क्षमा के ईश, नाम 'महाक्षम' सुर कहें।
नाममंत्र नत शीश, वंदूं मैं अतिभाव से।।505।।

अठरह सहस सुशील, 'महाशील' तुम नाम है।
पूरण हो गुण शील, नाममंत्र मैं नित नमूं।।506।।

तप अग्नी में आप, कर्मेंधन को होमिया[3]।
'महायज्ञ' तुम नाथ, वंदूं भक्ति बढ़ायके।।507।।

अतिशय पूज्य जिनेश! नाम 'महामख' धारते।
वंदूं भक्ति समेत, नाममंत्र प्रभु सुख मिले।।508।।

1. महाध्यानो पाठ आदि पु. में है। 3. होम कर दिया।

पाँच महाव्रत ईश, नाम 'महाव्रतपति' धरा।
नमूं नमाकर शीश, नाममंत्र प्रभु आपके।।509।।

'मह्य' आप जगपूज्य, गणधर साधू गण नमें।
मिलें स्वात्मपद पूज्य, नाममंत्र को वंदते।।510।।

'महाकान्तिधर' आप, अतिशय कांतिनिधान हो।
नाममंत्र तुम जाप, करे अतुल सुखसंपदा।।511।।

सबके स्वामी इष्ट, अतः 'अधिप' सुरगण कहें।
नाशो सर्व अनिष्ट, नाममंत्र तुम पूजहूँ।।512।।

'महामैत्रिमय' नाथ! सबसे मैत्रीभाव है।
नाममंत्र तुम जाप, त्रिभुवन को वश में करे।।513।।

अनवधि गुण के नाथ, तुम्हें 'अमेय' मुनी कहें।
पूजत बनूँ सनाथ, नाममंत्र प्रभु आपके।।514।।

'महोपाय' तुम नाथ! शिव के श्रेष्ठ उपाययुत।
नमत सर्व सुखसाथ, नाममंत्र को नित जपूँ।।515।।

नाथ!'महोमय' आप, अति उत्सव अरु ज्ञानयुत।
नाममंत्र तुम जाप, सर्व उपद्रव नाशता।।516।।

'महाकारुणिक' आप, दया धर्म उपदेशिया।
नाममंत्र का जाप, करत जन्म मृत्यु टले।।517।।

'मंता' आप महान, सब पदार्थ को जानते।
नमूं नाम गुणखान, पूर्ण ज्ञान संपति मिले।।518।।

सर्व मंत्र के ईश, 'महामंत्र' तुम नाम है।
तुम्हें नमें गणधीश, नाममंत्र मैं भी नमूं।।519।।

यतिगण में अतिश्रेष्ठ, नाम 'महायति' आपका।
वंदत ही पद श्रेष्ठ, नाममंत्र को नित नमूं।।520।।

'महानाद' प्रभु आप, दिव्यध्वनी गंभीर धर।
नमत बनूँ निष्पाप, नाममंत्र भी मैं नमूं।।521।।

दिव्यध्वनी गंभीर, योजन तक सुनते सभी।
नमत मिले भवतीर, 'महाघोष' तुम नाम को।।522।।

नाथ 'महेज्य' सुनाम, महती पूजा पावते।
सौ इन्द्रों से मान्य, नाममंत्र मैं नित नमूं।।523।।

'महसांपति' प्रभु आप, सर्व तेज के ईश हो।
तुम प्रताप भवताप, हरण करे मैं नित नमूं।।524।।

ज्ञान यज्ञ को धार, नाम 'महाध्वरधर' प्रभु।
मिले सर्व सुखसार, नाममंत्र मैं नित नमूं।।525।।

–स्रग्विणी छंद–

'धुर्य' हो मुक्ति के मार्ग में श्रेष्ठ हो।
कर्म-भू आदि में सर्व में ज्येष्ठ हो।।
आपके नाम के मंत्र को मैं नमूं।
ज्ञान आनंद पीयूष को मैं चखूँ।।526।।

हे 'महौदार्य' अतिशायि ऊदार हो।
आप निर्ग्रन्थ भी इष्ट दातार हो।।आप.।।527।।

पूज्य वाक्याधिपति सु 'महिष्ठवाक्' हो।
दिव्यवाणी सुधावृष्टि कर्ता सु हो।।आप.।।528।।

लोक आलोक व्यापी 'महात्मा' तुम्हीं।
अंतरात्मा पुनः सिद्ध आत्मा तुम्हीं।।आप.।।529।।

सर्व तेजोमयी 'महसांधाम' हो।
आत्म के तेज से सर्व जग मान्य हो।।आप.।।530।।

सर्व ऋषि में प्रमुख हो 'महर्षि' तुम्हीं।
ऋद्धि सिद्धी धरो आप सुख ही मही।।आप.।।531।।

श्रेष्ठ भव धारके आप 'महितोदया'।
तीर्थकर नाम से पूज्य धर्मोदया।।आप.।।532।।

भो 'महाक्लेशअंकुश' परीषहजयी।
क्लेश के नाश हेतू सुअंकुश सही।।
आपके नाम के मंत्र को मैं नमूं।
ज्ञान आनंद पीयूष को मैं चखूँ।।533।।

'शूर' हो कर्मक्षय दक्ष हो लोक में।
नाथ! मेरे हरो कर्म आनंद हो।।आप.।।534।।

हे 'महाभूतपति' गणधराधीश हो।
नाथ! रक्षा करो आप जगदीश हो।।आप.।।535।।

आपही हो 'गुरु' धर्म उपदेश दो।
तीन जग में तुम्हीं श्रेष्ठ हो सौख्य दो।।आप.।।536।।

आप ही हो 'महापराक्रम' के धनी।
केवलज्ञान से सर्ववस्तु भणी।।आप.।।537।।

हो 'अनंत' आपका अंत ना हो कभी।
नाथ! दीजे अनंतों गुणों को अभी।।आप.।।538।।

हे 'महाक्रोधरिपु' क्रोध शत्रू हना।
सर्व दोषारिनाशा सुमृत्यु हना।।आप.।।539।।

आप इंद्रिय 'वशी' लोक तुम वश्य में।
आत्मवश मैं बनूँ चित्त को रोक के।।आप.।।540।।

नाथ! हो 'महाभवाब्धिसंतारि' भी।
आप संसार सागर तरा तारते।।आप.।।541।।

आप ही 'महामोहाद्रिसूदन' कहे।
मोह पर्वत सुभेदा सुज्ञाता बनें।।आप.।।542।

आप ही हो 'महागुणाकर' लोक में।
रत्नत्रय की खनी भव्य पूजें तुम्हें।।आप.।।543।।

'क्षान्त' हो सर्वपरिषह उपद्रव सहा।
आपकी भक्ति से हो क्षमा गुण महा।।आप.।।544।।

भो 'महायोगिश्वर' गणधरादी पती।
योगियों में धुरंधर जगत के पती।।
आपके नाम के मंत्र को मैं नमूं।
ज्ञान आनंद पीयूष को मैं चखूँ।।545।।

हो 'शमी' शांत परिणाम से विश्व में।
पूर्ण शांती मिले पूजहूँ नाथ! मैं।।आप.।।546।।

हो 'महाध्यानपति' शुक्लध्यानीश हो।
शुक्ल परिणाम हों नाथ! वरदान दो।।आप.।।547।।

'ध्यातमहाधर्म' सब जीव रक्षा करी।
शुभ अहिंसामयी धर्म के हो धुरी।।आप.।।548।।

हो 'महाव्रत' प्रभो! पाँच व्रत श्रेष्ठ धर।
पूर्ण होवें महाव्रत बनूँ मुक्तिवर।।आप.।।549।।

हो 'महाकर्म अरिहा' महावीर हो।
कर्म अरि को हना आप अरिहंत हो।।आप.।।550।।

–सुन्दरी छंद–

निज स्वरूप विदित 'आत्मज्ञ' हो।
सब चराचर लोक सुविज्ञ हो।।
नमतहूँ तुम नाम सुमंत्र को।
सकल सौख्य लहूँ हन कर्म को।।551।।

सर्व देवन मधि 'महादेव' हो।
सुर असुर पूजित महादेव हो।।नमतहूँ.।।552।।

महत समरथवान 'महेशिता'।
सकल ऐश्वर धारि जिनेशिता।।नमतहूँ.।।553।।

'सरवक्लेशापह' दुख नाशिये।
सकल ज्ञान सुधामयसाजिये।।नमतहूँ.।।554।।

निज हितंकर 'साधु' कहावते।
स्वपर हित साधन बतलावते।।नमतहूँ.।।555।।

'सरबदोषहरा' जिन आप हो।
सकल गुणरत्नाकर नाथ हो।।
नमतहूँ तुम नाम सुमंत्र को।
सकल सौख्य लहूँ हन कर्म को।।556।।

'हर' तुम्हीं सब पाप विनाशते।
प्रभु अनंतसुखाकर आप ही।।नमतहूँ.।।557।।

जिन 'असंख्येय' प्रभु आप ही।
गिन नहीं सकते गुण साधु भी।।नमतहूँ.।।558।।

'अप्रमेयात्मा' जिन आप हो।
अनवधी शक्तीधर नाथ हो।।नमतहूँ.।।559।।

जिन 'शमात्मा' शांतस्वरूप हो।
सकल कर्मक्षयी शिवभूप हो।।नमतहूँ.।।560।।

प्रगट 'प्रशमाकर' शमखानि हों
जगत शांतिसुधा बरसावते।।नमतहूँ.।।561।।

'सरवयोगीश्वर' मुनि ईश हो।
गणधरादि नमावत शीश को।।नमतहूँ.।।562।।

भुवन में तुम ईश! 'अचिन्त्य' हो।
नहिं किसी जन के मन चिन्त्य हो।।नमतहूँ.।।563।।

प्रभु 'श्रुतात्मा' सब श्रुतरूप हो।
सकल भाव श्रुतांबुधि चन्द्र हो।।नमतहूँ.।।564।।

सकल जानत 'विष्टरश्रव' कहे।
धरम अमृतवृष्टि करो सदा।।नमतहूँ.।।565।।

वश किया मन 'दान्तात्मा' प्रभो।
सुतप क्लेश सहा जिन आपने।।नमतहूँ.।।566।।

प्रभु तुम्हीं 'दमतीरथईश' हो।
सकल इन्द्रियनिग्रह तीर्थ हो।।नमतहूँ.।।567।।

सकल ध्यात सु 'योगात्मा' तुम्हीं।
शुकल योगधरा जिन आपने।।नमतहूँ.।।568।।
प्रभु सदा तुम 'ज्ञानसुसर्वगा'।
जगत व्याप्त किया निज ज्ञान से।।नमतहूँ.।।569।।
प्रभु 'प्रधान' तुम्हीं त्रय लोक में।
प्रमुख हो निज आतम ध्यान से।।नमतहूँ.।।570।।
तुमहि 'आत्मा' ज्ञान स्वरूप हो।
सकल लोक अलोक सुजानते।।नमतहूँ.।।571।।
'प्रकृति' हो तिहुँलोक हितैषि हो।
प्रकृतिरूप धरम उपदेशि हो।।नमतहूँ.।।572।।
'परम' हो सबमें उत्कृष्ट हो।
परम लक्ष्मीयुत जिनश्रेष्ठ हो।।नमतहूँ.।।573।।
जगत 'परमोदय' जिननाथ हो।
परम वैभव से तुम ख्यात हो।।नमतहूँ.।।574।।
प्रभु 'प्रक्षीणाबंध' जिनेश हो।
सकल कर्म विहीन तुम्हीं कहे।।नमतहूँ.।।575।।

–मोतीदाम छंद–

प्रभो! तुम 'कामारी' जग सिद्ध।
किया तुम काम महाअरि विद्ध।।
नमूं तुम नाम महा गुणखान।
भजूँ निज धाम अनन्त महान्।।576।।
प्रभो! तुम 'क्षेमकृता' अभिराम।
जगत् कल्याण किया सुखधाम।।नमूं.।।577।।
प्रभो! तुम 'क्षेमसुशासन' सिद्ध।
किया मंगल उपदेश समृद्ध।।नमूं.।।578।।
'प्रणव' तुमही ओंकार स्वरूप।
सभी मंत्रों मधि शक्तिस्वरूप।।नमूं.।।579।।

'प्रणय' सबका तुमही में प्रेम।
नहीं तुम बिन होता सुख क्षेम।।
नमूं तुम नाम महा गुणखान।
भजूँ निज धाम अनन्त महान्।।580।।
तुम्हीं प्रभु 'प्राण' जगत् के त्राण।
दिया सब ही को जीवन दान।।नमूं.।।581।।
प्रभो! तुम 'प्राणद' बलदातार।
सभी जन रक्षक नाथ उदार।।नमूं.।।582।।
प्रभो! 'प्रणतेश्वर' भव्यन ईश।
नमें तुमको उनके प्रभु ईश।।नमूं.।।583।।
'प्रणाम' तुम्हीं जग ज्ञान धरंत।
तुम्हें भवि पा होते भगवंत।।नमूं.।।584।।
प्रभो! 'प्रणिधी' निधियों के स्वामि।
अनंत गुणाकर अंतर्यामि।।नमूं.।।585।।
तुम्हीं प्रभु 'दक्ष' समर्थ सदैव।
करो मुझ कर्म अरी का छेव।।नमूं.।।586।।
प्रभो! 'दक्षिण' हो सर्व प्रवीण।
सरल अतिशायि महागुणलीन।।नमूं.।।587।।
तुम्हीं 'अध्वर्यु' सुयज्ञ करंत।
महा शिवमार्ग दिया भगवंत।।नमूं.।।588।।
प्रभो! 'अध्वर' शिवपथ दर्शंत।
सदा ऋजु ही परिणाम धरंत।।नमूं.।।589।।
प्रभो! तुमही 'आनंद' अनूप।
मुझे सुखदेव सदा सुखरूप।।नमूं.।।590।।
सदा सबको आनंद करंत।
तुम्हीं प्रभु 'नंदन' नाम धरंत।।

नमूं तुम नाम महा गुणखान।
भजूँ निज धाम अनन्त महान्।।591।।

प्रभु तुम 'नन्द' समृद्धि निधान।
सदा करते तुम ज्ञान सुदान।।नमूं.।।592।।

प्रभो! तुम 'वंद्य' सुरासुर पूज्य।
सभी वंदन करते अनुकूल्य।।नमूं.।।593।।

'अनिंद्य' तुम्हीं सब दोष विहीन।
अनंत गुणों के पुंज प्रवीण।।नमूं.।।594।।

प्रभो! 'अभिनंदन' जग आनंद।
प्रशंसित हो त्रिभुवन में वंद्य।।नमूं.।।595।।

प्रभो! तुम 'कामह' काम हनंत।
विषयविषमूर्च्छित को सुखकंद।।नमूं.।।596।।

प्रभो तुम 'कामद' हो जग इष्ट।
सभी अभिलाष करो तुम सिद्ध।।नमूं.।।597।।

मनोहर 'काम्य' सभी जन इष्ट।
तुम्हें नित चाहत साधु गणीश।।नमूं.।।598।।

मनोरथ पूरण 'कामसुधेनु'।
करो मुझ वांछित पूर्ण जिनेन्द्र।।नमूं.।।599।।

'अरिंजय' आप करम अरि जीत।
हरो मुझ कर्म तुम्हीं जगमीत।।नमूं.।।600।।

–शंभु छंद–

प्रभु महामुनी से ले करके, सौ नाम तुम्हारे जग पूजें।
जो भक्ति वंदना नित्य करें, वो भव भव के दुख से छूटें।।
मैं वंदूं शीश नमा करके, मेरी भव भव की व्याधि हरो।
प्रभु सात परम स्थान देय, जिनगुण संपत्ती पूर्ण करो।।1।।

।।इति श्रीमहामुन्यादिशतम्।।

(7)

–भुजंगी छंद–

'असंस्कृतसुसंस्कार' नामा तुम्हीं।
बिना संस्कारे सुसंस्कृत तुम्हीं।।
नमूं नाम मंत्रावली भक्ति से।
पिऊँ आत्म पीयूष भी युक्ति से।।601।।

'अप्राकृत'[1] तुम्हीं तो स्वभावीक हो।
धरा अष्ट में वर्ष व्रत देश को।।नमूं.।।602।।

प्रभो! 'वैकृतांतकृत' आप ही।
विकारादि दोषा विनाशा तुम्हीं।।नमूं.।।603।।

प्रभो! 'अंतकृत' दुःख को नाशिया।
जनम मृत्यु का भी समापन किया।।नमूं.।।604।।

प्रभो! 'कांतगू' श्रेष्ठ वाणी धरो।
मुझे हो वचोसिद्धि ऐसा करो।।नमूं.।।605।।

महारम्य सुंदर प्रभो! 'कांत' हो।
त्रिलोकीपती साधु में मान्य हो।।नमूं.।।606।।

प्रभो! आप 'चिंतामणी' रत्न हो।
सभी इच्छती वस्तु देते सदा।।नमूं.।।607।।

'अभीष्टद' अभीप्सित लहें भक्त ही।
मुझे दीजिये नाथ! मुक्ती मही।।नमूं.।।608।।

न जीते गये हो 'अजित' आप हो।
प्रभो! मोह जीतूँ यही शक्ति दो।।नमूं.।।609।।

प्रभो! आप 'जितकामअरि' लोक में।
विषय काम क्रोधादि जीता तुम्हीं।।नमूं.।।610।।

'अमित' माप होता नहीं आपका।
अनंते गुणों की खनी आप हो।।नमूं.।।611।।

1. प्राकृत है आदि पु. में।

'अमितशासना' धर्म अनुपम कहा।
मुझे आप सम नाथ कीजे अबे।।
नमूं नाम मंत्रावली भक्ति से।
पिऊँ आत्म पीयूष भी युक्ति से।।612।।

'जितक्रोध' हो आप शांती सुधा।
महा शांति से क्रोध जीता सभी।।नमूं.।।613।।

'जितामित्र' कोई न शत्रु रहा।
प्रभो! आप ही सर्वप्रिय लोक में।।नमूं.।।614।।

'जितक्लेश' सब क्लेश जीता तुम्हीं।
सभी क्लेश मेरे निवारो अबे।।नमूं.।।615।।

'जितांतक' प्रभो! मृत्यु को नाशिया।
समाधी मिले अंत में भी मुझे।।नमूं.।।616।।

प्रभो! आप 'जिनेन्द्र' हो विश्व में
तुम्हीं श्रेष्ठ हो कर्मजयि साधु में।।नमूं.।।।617।।

प्रभो आप ही 'परमआनंद' हो।
मुझे आत्म आनंद दीजे अबे।।नमूं.।।618।।

प्रभो! आप 'मुनींद्र' हो लोक में।
मुनीनाथ मानें नमें साधु भी ।।नमूं.।।619।।

प्रभो! 'दुंदुभीस्वन' ध्वनी आपकी।
सुगंभीर दुंदभि सदृश ही खिरे।।नमूं.।।620।।

'महेन्द्रासुवंद्या' प्रभो आपही।
सभी इंद्र से वंद्य हो पूज्य हो।।नमूं.।।621।।

प्रभो! आप 'योगीन्द्र' हो विश्व में।
सभी ध्यानियों में तुम्हीं श्रेष्ठ हो।।नमूं.।।622।।

प्रभो! तुम 'यतीन्द्रा' मुनी साधु में।
सदा श्रेष्ठ मानें गणाधीश में।।नमूं.।।623।।

प्रभो! 'नाभिनन्दन' तुम्हीं मान्य हो।
नृपति नाभि के पुत्र विख्यात हो।।
नमूं नाम मंत्रावली भक्ति से।
पिऊँ आत्म पीयूष भी युक्ति से।।624।।

प्रभो! आप 'नाभेय' हो पूज्य हो।
महानाभिराजा से उत्पन्न हो।।नमूं.।।625।।

–नाराच छंद–

जिनेन्द्र! आप 'नाभिजा', शतेंद्रवृन्द पूज्य हो।
त्रिलोक में महान् हो, सभासरोज सूर्य हो।।
मुनीन्द्र आप नाममंत्र, ध्यावते सुध्यान में।
नमूं सदैव मैं यहाँ, लहूँ निजात्म धाम मैं।।626।।

'अजात' हो जिनेश! जन्म–शून्य आप सिद्ध हो।
मुझे प्रभो! भवाब्धि से, निकालिये समर्थ हो।।मुनीन्द्र.।।627।।

जिनेश! 'सुव्रत' आप श्रेष्ठ, संयमादि धारियो।
महाव्रतादि पूर्ण कीजिये, मुझे सुतारियो।।मुनीन्द्र.।।628।।

तुम्हीं 'मनू' समस्त कर्म–भूमि को सुथापिया।
कुलंकरों से जन्म लेय, तीर्थ चक्र धारिया।।मुनीन्द्र.।।629।।

जिनेश! 'उत्तमा' त्रिलोक, में महान श्रेष्ठ हो।
मुनीशवृन्द पूज्य हो, असंख्य जीव ज्येष्ठ हो।।मुनीन्द्र.।।630।।

'अभेद्य' हो किन्हीं जनों से, छेद भेद योग्य ना।
समस्त जन्म मृत्यु रोग, नाश के सुखी घना।।मुनीन्द्र.।।631।।

'अनत्ययो' न नाश हो, अनंत काल आपका।
मुझे सुखी सदा करो, न अंत हो सुज्ञान का।।मुनीन्द्र.।।632।।

'अनाशवान्' भोजनादि, से विहीन आप हैं।
महान तप किया प्रभो, समस्त वीश्वास्य हैं।।मुनीन्द्र.।।633।।

प्रभो! 'अधीक' उत्कृष्ट, आत्मा तुम्हीं कहे।
सुपाय वास्तवीक सौख्य, को अधिक तुम्हीं रहें।।मुनीन्द्र.।।634।।

त्रिलोक के गुरु 'अधी, गुरु' तुम्ही महान हो।
नमाय माथ को सदा, सुआप को प्रणाम हो।।मुनीन्द्र.।।635।।
'सुगी' सुवाणि आपकी, अतीव शोभना कही।
अनंत दुःख से निकाल, मोक्ष में धरे वही।।मुनीन्द्र.।।636।।
'सुमेधसा' महान् बुद्धि, से सुकेवली भये।
प्रभो! अपूर्व ज्ञान दो, अनंत गुण मिले भये।।मुनीन्द्र.।।637।।
पराक्रमी समस्त कर्म, नाशहेतु शूर हो।
अतेव 'विक्रमी' कहा-वते अपूर्व सूर्य हो।।मुनीन्द्र.।।638।।
त्रिलोक 'स्वामि' हो समस्त भव्य जीव पालते।
अनंत धाम में धरो भवाब्धि से निकालते।।मुनीन्द्र.।।639।।
'दुरादिधर्ष' कोई ना, अनादरादि कर सके।
प्रभो! तुम्हीं समस्त भव्य, बन्धु हो जगत् विषे।।मुनीन्द्र.।।640।।
प्रभो! 'निरुत्सुको' तुम्हीं, समस्त आश शून्य हो।
सुमुक्तिवल्लभा विषे हि, औत्सुक्य पूर्ण हो।।मुनीन्द्र.।।641।।
'विशिष्ट' आप ही विशेष, रूप श्रेष्ठ विश्व में।
गणीन्द्र शीश नावते, न फेर विश्व में भ्रमें।।मुनीन्द्र.।।642।।
जिनेश! 'शिष्टभुक्' तुम्हीं, सुसाधुलोक पालते।
अनिष्ट को निकाल सत्य, ज्ञान आप धारते।।मुनीन्द्र.।।643।।
जिनेश! 'शिष्ट' श्रेष्ठ, आचरण तुम्हीं धरा यहाँ।
अशेष मोहशत्रु नाश, के अनिष्ट को दहा।।मुनीन्द्र.।।644।।
जिनेश! 'प्रत्ययो' प्रतीति, योग्य आप एकही।
समस्त ज्ञानरूप हो, पुनीत पुण्यरुप ही।।मुनीन्द्र.।।645।।
सुरम्य 'कामनो' प्रभो! त्रिलोक चित्तहारि हो।
न आपके समान रूप, इंद्र नेत्रहारि हो।।मुनीन्द्र.।।646।।
'अनघ' जिनेश! पापहीन, पुण्य के निधान हो।
अनंत जीवराशि आप-को नमें प्रमाण हो।।मुनीन्द्र.।।647।।

जिनेन्द्र! 'क्षेमि' सर्वक्षेम, युक्त आप विश्व में।
समस्त रोग शोक दुःख, मेट दो तुम्हें नमें।।
मुनीन्द्र आप नाममंत्र, ध्यावते सुध्यान में।
नमूं सदैव मैं यहाँ, लहूँ निजात्म धाम मैं।।648।।
जिनेन्द्र! 'क्षेमंकरो', त्रिलोक क्षेमकारि हो।
दरिद्र दुःख मेट सौख्य, दो सदैव भारि हो।।मुनीन्द्र.।।649।।
जिनेन्द्र! 'अक्षयो' तुम्हीं, सदैव क्षय विहीन हो।
मुझे अखंडधाम दो, सदा स्वयं अधीन जो।।मुनीन्द्र.।।650।।

-श्री छंद-

'क्षेमधरमपति' क्षेम करो हो, सर्व अमंगल दोष हरो हो।
आप सुनाम नमूं मन लाके, सर्व अमंगल दूर भगाके।।651।।
आप 'क्षमी' सुसहिष्णु कहे हो।
श्रेष्ठ क्षमा उपदेश रहे हो।।आप.।।652।।
आप जिनेश! 'अग्राह्य' कहाते।
अल्प सुज्ञानी जान न पाते।।आप.।।653।।
'ज्ञान निग्राह्य' प्रभो! जग में हों।
ज्ञान स्वसंविद से ग्रह ही हो।।आप.।।654।।
'ज्ञानसुगम्य' सुध्यान करें जो।
नाथ तभी तुम जान सके वो।।आप.।।655।।
नाथ! 'निरुत्तर' आप कहे हो।
सर्व जगत् उत्कृष्ट भये हो।आप.।।656।।
हे 'सुकृती' तुम पुण्य धरन्ता।
पुण्य करें जन भक्ति करन्ता।।आप.।।657।।
'धातु' तुम्हीं सब शब्द जनंता।
चिन्मय धातु तनू भगवंता।।आप.।।658।।

नाथ! तुम्हीं 'इज्यार्ह' कहाये।
इन्द्र मुनी गण पूज्य सुगायें।।आप.।।659।।
नाथ! 'सुनय' सहपेक्ष नयों से।
सत्य सुधर्म कहा अति नीके।।आप.।।660।।
'श्रीसुनिवास' तुम्हीं प्रभु माने।
सम्पति धाम तुम्हें मुनि जान।आप.।।661।।
नाथ! तुम्हीं 'चतुरानन' ब्रह्मा।
दीख रहे मुख चार सभा मा।।आप.।।662।।
'चतुर्वक्त्र' तुमको सुर पेखें।
नाथ! समोसृति में तुम देखें।।आप.।।663।।
हे 'चतुरास्य' तुम्हें भवि वंदे।
जन्म जरामृति तीनहिं खंडे।।आप.।।664।।
नाथ! 'चतुर्मुख' चौमुख धर्ता।
द्वादश गण जनता मन हर्ता।आप.।।665।।
'सत्यात्मा' प्रभु सत्य स्वरूपी।
दिव्य ध्वनी मय वाक्य निरूपी।।आप.।।666।।
'सत्यविज्ञान' प्रभो! तुम ही हो।
केवलज्ञान लिये चिन्मय हो।।आप.।।667।।
'सत्यसुवाक्' प्रभो सत भंगी।
वाक्यसुधा तुम गंगतरंगी।।आप.।।668।।
'सत्यसुशासन' नाथ तुम्हारा।
भव्य जनों हित एक सहारा।।आप.।।669।।
'सत्याशिष्' शुभ आशिस् देते।
सर्व अमंगल भी हर लेते।।आप.।।670।।
'सत्यसुसन्धान' सुविभु नामा।
सत्य प्रतिज्ञ तुम्हें सुर माना।।आप.।।671।।

'सत्य' प्रभो! तुम सत्पथदर्शी।
भव्य जनों हित वाक्य प्रदर्शी।।
आप सुनाम नमूं मन लाके।।
सर्व अमंगल दूर भगाके।।672।।
'सत्यपरायण' नाथ! हितैषी।
तीन जगत के हित उपदेशी।।आप.।।673।।
'स्थेयान्' प्रभु नित स्थिर हो।
नाथ! मुझ स्थिर धाम दिला दो।आप.।।674।।
'स्थवीयान्' प्रभु आप बड़े हो।
सर्व गणी गण में भि बड़े हो।।आप.।।675।।

–तोटक छंद–

प्रभु 'नेदिययान' निज भक्तन के।
अति सन्निधि हो मन में बसते।।
तुम नाम सुमंत्र जपूँ नित ही।
भव वारिध पार करो अब ही।।676।।
प्रभु आप 'दवीयान्' पाप हना।
निज आत्म सुधारस पीय घना।।तुम.।।677।।
प्रभु 'दूरसुदर्शन' हो तुम ही।
अणुरूप नहीं मुनि के मन ही।।तुम.।।678।।
तुम नाथ! 'अणोरणियान्' कह्यो।
अति सूक्षम योगि सुगोचर हो।।तुम.।।679।।
'अनणू' तुम ज्ञान शरीर कहे।
अणु-पुद्गल नाहिं महान् कहें।।तुम.।।680।।
'गुरुराद्यगरीयस' के जग में।
गुरुओं मधि श्रेष्ठ गुरु प्रभु हैं।।तुम.।।681।।

'सदयोग' सदा तुम योग धरा।
सब योगि सदा तुम ध्यान धरा।।तुम.।।682।।
'सदभोग' सुपुष्प सदा बरसें।
सुर दुंदुभि आदि करें हरसें।।तुम.।।683।।
'सद्तृप्त' सदाप्रभु तृप्त रहो।
क्षुध प्यास नहीं प्रभु तुष्ट रहो।।तुम.।।684।।
प्रभु आप 'सदाशिव' हो जग में।
नहिं कर्म कलंक छुआ तुमने।।तुम.।।685।।
प्रभु आप 'सदागति' ज्ञानमयी।
गति पंचम मोक्ष लिया तुमही।।तुम.।।686।।
'सदसौख्य' सदा प्रभु सौख्य लह्यो।
सब सात असात सुखादि हर्यो।।तुम.।।687।।
प्रभु आप 'सदाविद्य' हो जगमें।
शुचि केवलज्ञान धरो निज में।।तुम.।।688।।
जिननाथ! 'सदोदय' आप रहें।
नित उदितरूप रवि आप कहें।।तुम.।।689।।
ध्वनि उत्तमनाथ! 'सुघोष' तुम्हीं।
इक योजन जीव सुनें सबहीं।।तुम.।।690।।
प्रभु आप 'सुमुख' सुंदर मुख हो।
विकसंत कमल मंदस्मित हो।।तुम.।।691।।
प्रभु 'सौम्य' तुम्हीं शशि सुंदर हो।
तुम गावत गीत पुरंदर हो।।तुम.।।692।।
'सुखदं' सब जीव शुभंकर हो।
सुखदायि जिनेश्वर आपहि हो।।तुम.।।693।।
'सुहितं' प्रभु सर्वहितंकर हो।
मुझको निज दास करो शिव हो।।तुम.।।694।।

प्रभु आप 'सुहृत्' सबके मितु हो।
मुझ चित्त बसो सब ही वश हों।।
तुम नाम सुमंत्र जपूँ नित ही।
भव वारिध पार करो अब ही।।695।।
प्रभु आप 'सुगुप्त' सुरक्षित हो।
तुम भक्त सभी अरि रक्षित हों।।तुम.।।696।।
प्रभु 'गुप्तिभृता' त्रयगुप्ति धरी।
तुम भक्ति किया मुझ धन्य घरी।।तुम.।।697।।
प्रभु 'गोप्ता' रक्षक हो जग के।
मुझ पे अब नाथ कृपा कर दे।।तुम.।।698।।
प्रभु 'लोकअध्यक्ष' त्रिलोकपती।
मुझ व्याधि उपाधि हरो जलदी।।तुम.।।699।।
प्रभु आप 'दमेश्वर' हो नित ही।
सब इंद्रिय जीत अतीन्द्रिय ही।।तुम.।।700।।

–शंभु छंद–

प्रभु असंस्कृतादि से लेकर, सौ नाम पढ़े जो भव्य सदा
सब भूत पिशाच उपद्रव भी, नश जांय सभी नशती विपदा।।
ज्वर कुष्ठ भगंदर कामल आदिक, रोग सभी नशते क्षण में।
मैं शीश नमाकर वंदत हूँ, प्रभु आप बसो नित मुझ मन में।।1।।

।।इति श्रीअसंस्कृतादिशतम्।।

(8)

चाल–पूजों पूजों श्री.....

'वृहद्वृहस्पति' प्रभु नाम है। सुरपति के गुरु सरनाम हैं।
वंदते ही मिले मोक्षधाम है। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें जिनेश्वर नामा। जिससे पावें निजातम धामा।
सर्व कर्मों का होवे खातमा। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नितही।।701।।

प्रभु 'वाग्मी' तुम्हीं त्रिभुवन में। शुभवचन द्वादशों गण में।
वंदते पाप नश जाय क्षण में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें जिनेश्वर नामा। जिससे पावें निजातम धामा।
सर्व कर्मों का होवे खातमा। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नितही।।702।।

प्रभु 'वाचस्पती' आप जग में। वचनों के स्वामि सहज में।
नाम लेते मिले शांति मन में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें. ।।703।।

तुम नाम 'उदारधी' है। ज्ञानदान का मूल वही है।
वंदते आप सुख की मही हैं। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।704।।

प्रभु आप 'मनीषी' कहाये। केवलज्ञान सद्बुद्धि पाये।
शत इंद्र सदा गुण गायें। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।705।।

आपको ही 'धिषण' साधु कहते। सर्वज्ञानैक बुद्धी धरते।
भक्त वंदन स्वपर ज्ञान लहते। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।706।।

आप 'धीमान्' त्रैलोक्य में हैं। ज्ञान पंचम धरें श्रेष्ठ ही हैं।
भक्त भी स्वात्म ज्ञानी बने हैं। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।707।।

प्रभु 'शेमुषीश' आप ही हैं। सर्व ही ज्ञान के नाथ ही हैं।
दीजिये अब मुझे सुमती है। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।708।।

प्रभु आप 'गिरांपति' जग में। सर्वभाषामयी ध्वनि भवि में।
हो सत्य महाव्रत मुझमें। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।709।।

आप 'नैकरूप' मुनिगण में। विष्णु ब्रह्म महेश्वर सच में।
भक्त नाशें करमरिपु क्षण में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।710।।

प्रभु आप 'नयोत्तुंग' मानें। सब नयों से श्रेष्ठ बखानें।
मन अनेकांत सरधाने। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।711।।

'नैकात्मा' तुम्हीं त्रिभुवन में। गुण बहुते धरें प्रभु निज में।
गुणपूर्ण भरूँ मैं निज में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें जिनेश्वर नामा। जिससे पावें निजातम धामा।
सर्व कर्मों का होवे खातमा। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नितही।।712।।

प्रभु 'नैकधर्मकृत्' तुम हो। बहुधर्म वस्तु के कहहो।
निजधर्म अनंत मुझे हों। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।713।।

प्रभु आप 'अविज्ञेय' ही हो। जन जानन योग्य नहीं हो।
मुझ आत्म स्वभाव प्रगट हो। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।714।।

प्रभु आप 'अप्रतर्क्यात्मा' । न तर्कादि गोचर महात्मा।
मुझे कीजे तुरत अंतरात्मा। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।715।।

प्रभु आप 'कृतज्ञ' कहे हो। सभी कृत्य तुम्हीं जानते हो।
नाथ! मुझमें यही गुण प्रगट हो। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।716।।

'कृतलक्षण'आप भुवन में। वस्तु लक्षण कहते हो ध्वनि में।
मैं धारूँ सुलक्षण हृदय में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।717।।

प्रभु 'ज्ञानगर्भ' तुमही हो। सब ज्ञेय सुज्ञान मही हो।
मेरा भी ज्ञान सही हो। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।718।।

प्रभु 'दयागर्भ' त्रिभुवन में। तुम दयासिंधु भविजन में।
मैं धरूँ दया निजपर में। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।719।।

प्रभु 'रत्नगर्भ' मुनिनाथा। रत्न वर्षे पंचदश मासा।
मैं नमूँ नमाकर माथा। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।720।।

प्रभु आप 'प्रभास्वर' ही हो। त्रैलोक्य प्रकाशि रवी हो।
मुझ हृदय ज्ञान ज्योति हो।सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।721।।

प्रभु 'पद्मगर्भ' तुम सच में। रहे कमलाकार गरभ में।
लहूँ गर्भ प्रभो! तुम सम मैं। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।722।।

प्रभु 'जगद्गर्भ' तुम भासें। तुम ज्ञान में जग प्रतिभासे।
हो ज्ञान मेरा तम नाशे। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।723।।

प्रभु 'हेमगर्भ' तुम ही हो। गर्भ बसत स्वर्णमय भू हो।
मुझ रोग शोक हर तुम हो। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें. ।।724।।

प्रभु आप 'सुदर्शन' मानें। तुम दर्शन सुखकर जानें।
वंदन सब संकट हानें। सुनाम मंत्र वंदन करूँ मैं नित ही।।
आवो वंदें.।।725।।

–प्रहरनकलिका छंद–

प्रभु तुम 'लक्ष्मीवन्' भुवि गुरु हो।
अन्तर बहि संपद धर जिन हो।।
तुम नमत सुनाम सकल सुख हो।
दुख दरिद विनाश, अतुलनिधि हो।।726।।

प्रभु 'त्रिदशअध्यक्ष' सुर गणपति हो।
त्रिभुवन धर भानु अतुल रवि हो।।
तुम नमत सुनाम सकल सुख हो।
दुख दरिद विनाश, अतुलनिधि हो।।727।।

प्रभु अतुल 'दृढ़ीयन्' इस जग में।
नहिं तुम सम हों दृढ़ मुनि जग में।।तुम.।।728।।

सब त्रिभुवन ईश तुमहि 'इन' हो।
मुझ सब अघ नाशत सुखप्रद हो।।तुम.।।729।।

समरथयुत 'ईशित' तुमहि कहे।
मुझ अहित निवारण तुम पद हैं।।तुम.।।730।।

प्रभु तुमहि 'मनोहर' त्रिभुवन में।
हरि हर परब्रह्म न तुम सम हैं।।तुम.।।731।।

तनु सुभग 'मनोज्ञांग' अतिशय ही।
भवि जपत तुम्हें दुख विनशत ही।।तुम.।।732।।

अतिशय धृति 'धीर' भविक गण में।
तुम जपत हिं पीर टरत क्षण में।।तुम.।।733।।

अतिशय 'गंभीर शासन' जग में।
शिवपद कर धर्म शरण जग में।।तुम.।।734।।

अभय 'धरमयूप' शुभ धरम हो।
सुर सुखप्रद नाथ! मुकति गृह हो।।तुम.।।735।।

प्रभु तुमहि 'दयायाग' सुखप्रद हो।
सब अशुभ हरो सुअभयप्रद हो।।तुम.।।736।।

सुखद 'धरमनेमि' जिनवर हो।
इसजग मधि आप, धरम धुरि हो।।तुम.।।737।।

प्रभु तुमहि 'मुनीश्वर' मुनिपति हो।
सब गुण मणि भूषित सुखनिधि हो।।तुम.।।738।।

प्रभु 'धरमचक्रायुध' यम अरि हो।
तुम दरसन से मुझ अघ क्षय हो।।तुम.।।739।।
निजगुणरत 'देव' सुरगप्रद हो।
मुझ गुणमणि देव परमगति हो।।तुम.।।740।।
सुखद 'करमहा' अघरिपु हन हो।
समरस सुखदा शिव तियपति हो।।तुम.।।741।।
तुमहि 'धरमघोषण' शिव भरता।
अतिशय शिव के गुणमणि करता।।तुम.।।742।।
प्रभु तुमहि 'अमोघवच' जगत में।
तुम विरथ न वाक्य कबहुँ सच में।।तुम.।।743।।
भुवन मधि 'अमोघाज्ञ' तुमहि हो।
निष्फल नहिं आज्ञा सुर शिर धर्‌यो।। तुम.।।744।।
प्रभु जिनवर 'निर्मल' शुचिकर हो।
मल विरहित कर्म रहित शिव हो।।तुम.।।745।।
जिनवर सु 'अमोघशासन' तुम हो।
नहिं निष्फल शासन कबहुंक हो।। तुम.।।746।।
प्रभु तुमहि 'सुरूप' असुर सुर में।
नहिं तुम सम रूप दिखत जग में।। तुम.।।747।।
तुम 'सुभग' महाप्रभु अतिशय हो।
बहुविध शुभ ऐश्वर गुण युत हो।। तुम.।।748।।
सब कुछ पर त्याग वनन विचरें।
जिनवर तुम 'त्यागि' सुरन उचरें।। तुम.।।749।।
स्वपर समय जानकर शिव भये।
अनुपम प्रभु 'ज्ञातृ' शिवप्रद भये।। तुम.।।750।।

–इन्द्रवज्रा–

स्वामी 'समाहित' सुसमाधि ध्यानी, प्राणी समाधान लहें तुम्हीं से।
वंदूं सदा नाम सुमंत्र स्वामिन्, मोहारिशत्रू क्षण में नशेगा।।751।।

हे नाथ! 'सुस्थित' सुख से निवासा।
मुक्तीरमा आप स्वयं वरे हैं।।
वंदूं सदा नाम सुमंत्र स्वामिन्।
मोहारिशत्रू क्षण में नशेगा।।752।।
आरोग्य आत्मा प्रभु 'स्वास्थ्यभाक्' हो।
संसार व्याधी नहिं पूर्णस्वस्था।।वंदूं.।।753।।
हो 'स्वस्थ' स्वामी भवरोग नाहीं।
आत्मस्थ हो सर्वविकार शून्या।।वंदूं.।।754।।
हो 'नीरजस्को' नहिं कर्मधूली।
मेरे प्रभो! कर्म समूल नाशो।।वंदूं.।।755।।
स्वामी 'निरूद्धव' जग में कहाते।
संपूर्ण ही उत्सव इंद्र कीने।।वंदूं.।।756।।
स्वामी तुम्हीं कर्म 'अलेप' मानें।
मेरे सभी लेप हटाय दीजे।।वंदूं.।।757।।
हे 'निष्कलंकात्मन्' इन्द्र पूजें।
मैं भी सदा शीश नमाय वंदूँ।।वंदूं.।758।।
हो 'वीतरागी' गतराग द्वेषा।
रागादि मेरे मन से हटा दो।।वंदूं.।।759।।
स्वामी 'गतस्पृह' तुम ही यहाँ पे।
इच्छा निवारी जग के गुरु हो।।वंदूं.।।760।।
स्वामी सु 'वश्येन्द्रिय' आप ही हो।
पाँचों हि इन्द्री वश में किया था।।वंदूं.।।761।।
मानें 'विमुक्तात्मन्' आप ही हैं।
कर्मारि बन्धन तुम काट डाले।।वंदूं.।।762।।
हो 'निःसपत्ना' नहिं शत्रु कोई।
संपूर्ण प्राणी तुम मित्र मानें।।वंदूं.।।763।।

जीता स्व इन्द्रीय 'जितेन्द्रियो' हो।
जीतूं स्व इन्द्री प्रभु शक्ति देवो।।वंदूं.।।764।।
सम्पूर्ण शांतीश 'प्रशांत' माने।
वंदूँ तुम्हें शांति मिले मुझे भी।।वंदूं.।।765।।
'आनन्तधामर्षि' ऋषी गणों में।
तेजस्विता आप अनंत धारो।।वंदूं.।।766।।
स्वामी यहाँ 'मंगल' आप ही हैं।
नाशो अमंगल भवि प्राणियों के।।वंदूं.।।767।।
पापारि नाशा 'मलहा' कहाये।
सम्पूर्ण धोये मल कर्म जैसे।।वंदूं.।।768।।
स्वामी 'अनघ' पाप निमूल नाशा।
कीजे सभी पाप विनाश मेरा।।वंदूं.।।769।।
हूये 'अनीदृक्' नहिं आप जैसा।
इन्द्रादि वन्दे रुचि से तुम्हें ही।।वंदूं.।।770।।
हे नाथ! 'उपमाभुत' इन्द्र भी तो।
दें आप की तो उपमा तुम्हीं से।।वंदूं.।।771।।
हो भव्य भाग्योदय हेतु स्वामी।
'दिष्टी' कहाते जग में इसी से ।।वंदूं.।।772।।
हो 'दैव' प्राणी शुभ भाग्य होते।
वंदूँ तुम्हें दैव समस्त नाशूँ।।वंदूं.।।773।।
कैवल्यज्ञानी नभ में विहारी।
होते 'अगोचर' नहिं सर्व जानें।।वंदूं.।।774।।
रूपादि से शून्य 'अमूर्त' स्वामी।
आत्मा अमूर्तीक मिले मुझे भी।।वंदूं.।।775।।

–सुखमा छंद–

'मूर्तीमन्' की भक्ती करिये, नाहीं मन में शंका धरिये।
नामावलि को वंदूं नित ही, व्याधी तन से भागे झट ही।।776।।

'एक' तुम्हें ही साधू कहते।
दूजा नहिं कोई भी तुमसे।।नामा.।।777।।

नानागुण की पूर्ती तुम में,स्वामी तुम ही 'नैक' जगत में।।
नामावलि को वंदूं नित ही, व्याधी तन से भागे झट ही।।778।।

हो 'नानैकतत्त्वदृक्' तुम ही।
आत्मा तज ना देखे कुछ ही।।नामा.।।779।।

'अध्यातमगम्या' हो प्रभु जी।
आत्म ग्रंथ से जाने मुनि जी।।नामा.।।780।।

माने 'अगम्यात्मा' तुम हो।
मिथ्यादृश ना जाने तुम को।।नामा.।।781।।

आप 'योगविद्' की जो शरणे।
मुक्ती तिय को निश्चित परणे।।नामा.।।782।।

नाथ! 'योगिवंदित' हो जग में।
योगी जन ध्याते भी मन में।।नामा.।।783।।

'सर्वत्रग' व्यापा त्रै जग को।
सो ही ज्ञान अपेक्षा समझो।।नामा.।।784।।

आप 'सदाभावी' हो जग में।
तिष्ठो नित ना नाश स्वपन में।।नामा.।।785।।

हो 'त्रिकालविषयार्थ' सुदृक् ही।
त्रैकालिक जाना सब कुछ ही ।।नामा.।।786।।

हो 'शंकर' भी भव्यन सुख दो।
नाशो मुझ दोषादी दुख को।।नामा.।।787।।

हो 'शंवद' शं सौख्यं कर ही।
तीनों जग में वंदे मुनि भी।।नामा.।।788।।

स्वामिन्! चित्त अश्व का जीता।
'दांत' कहाये धर्म समेता।।नामा.।।789।।

स्वामिन्! दमी इंद्रियाँ दमते।
पूरी मन की इच्छा करते।।नामा.।।790।।

'क्षान्तिपरायण' मानें तुमही। ध्याते तुम को मृत्यू नश ही।।
नामावलि को वंदूं नित ही, व्याधी तन से भागे झट ही।।791।।

स्वामी 'अधिप' बखाने जग में।
इंद्रादिक पूजें आनंद में।।नामा.।।792।।

स्वामी 'परमानंद' तृपत हो।
आत्मा मुझ आनंद मगन हो।।नामा.।।793।।

हो नाथ! 'परात्मज्ञ' अतुल ही।
जाना पर को आत्मा निज भी।।नामा.।।794।।

हो आप 'परात्पर' भी जग में।
श्रेष्ठों मधि श्रेष्ठाधिप सब में।।नामा.।।795।।

स्वामी 'त्रिजगद्वल्लभ' तुम हो।
तीनों जग में मनभावन हो।।नामा.।।796।।

स्वामी तुम 'अभ्यर्च्य' सुरन से।
सौ इंद्रन से साधू गण से।।नामा.।।797।।

स्वामी 'त्रिजगन्मंगलोदय' हो।
तीनों जग में मंगल कर हो।।नामा.।।798।।

'त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्री' तुम हो।
सौ इंद्रन से पूज्य चरण हो।।नामा.।।799।।

'त्रीलोकाग्रशिखामणि' जिन हो।
लोक शिखर के चूड़ामणि हो।।नामा.।।800।।

–शंभु छंद–

वृहद्वृहस्पति आदि नाम सौ, भक्ति भाव से नित मैं वंदूं।
सर्व अमंगल दोष नशाकर, आधि व्याधि संकट से छूटूँ।।
भूत प्रेत डाकिनि शाकिनि भी, तुम भक्तों से दूर भगे हैं।
नित नव मंगल संपति संतति, यश भाग्योदय श्रेष्ठ जगे हैं।।1।।

।।इति श्रीवृहदादिशतम्।।

(9)

–अनुष्टुप् छंद–

स्वामी 'त्रिकालदर्शी' हो, सभी पदार्थ देखते।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।801।।

प्रभो! 'लोकेश' माने हो, तीन लोक प्रभु कहे।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।802।।

'लोकधाता' तुम्हीं माने, तीनों जगत् पोषते।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।803।।

हो 'दृढव्रत' व्रतों में, स्थैर्य धारते।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।804।।

'सर्वलोकातिग' स्वामिन्! सभी जग में श्रेष्ठ हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।805।।

पूजा के योग्य हो स्वामिन्! 'पूज्य' माने सभी सदा।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।806।।

अभीष्ट में पहुँचाते, 'सर्वलोकैकसारथी'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।807।।

प्राचीन सबमें ही हो, माने 'पुराण' आपको।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।808।।

गुणों को श्रेष्ठ आत्मा के, पाया 'पुरूष' आप हैं।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।809।।

सर्वप्रथम होने से, 'पूर्व' माने तुम्हीं प्रभो!।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।810।।

अंग पूर्वादि विस्तारे, 'कृतपूर्वांग-विस्तरः'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।811।।

देवों में मुख्य होने से, 'आदिदेव' तुम्हीं कहे।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।812।।

'पुराणाद्य' प्रभो! माने, प्राचीनों में सुआदि हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।813।।

'पुरुदेव' तुम्हीं माने, श्रेष्ठ देव महान हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।814।।

देवों के देव होने से, तुम्हीं हो 'अधिदेवता'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।815।।

'युगमुख्य' युगादी के, माने प्रधान आप हैं।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।816।।

'युगज्येष्ठ' कहे स्वामी, युग में सर्व श्रेष्ठ हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।817।।

युगादी में उपदेशा, 'युगादिस्थितिदेशकः'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।818।।

'कल्याणवर्ण' कांती से, सुवर्ण सम हो तुम्हीं।।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।819।।

नाथ! 'कल्याण' भव्यों के, हितकर्ता प्रसिद्ध हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।820।।

'कल्य' नीरोग होने से, तत्पर मुक्ति हेतु हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।821।।

लक्षण हितकारी हैं, अतः 'कल्याणलक्षणः'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।822।।

'कल्याणप्रकृती' स्वामी, हो कल्याण स्वभाव ही।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।823।।

स्वर्णवत् प्रभु दीप्तात्मा, 'दीप्रकल्याणआतमा'।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।824।।

'विकल्मष' तुम्हीं स्वामी, कालिमाकर्म शून्य हो।
नाम मंत्र नमूं प्रीत्या, आत्म सौख्य सुधा मिले।।825।।

–चंपकमाला छंद–

कर्म कलंकादी निरमुक्ता, हो 'विकलंका' कर्म हरो मे।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।826।।

देह कला से हीन रहे हो ,नाथ! 'कलातीते' जग में हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।827।।

हो 'कलिलघ्न' तुम्हीं अघ हीना, पाप हमारे क्षालन कीजे।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।828।।

नाथ! 'कलाधर' सर्व कला से, पूर्ण तुम्हीं हो सर्व गुणों से।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।829।।

'देवदेव' हो तीन जगत् में, नाथ! सुदेवों के अधिदेवा।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।830।।

नाथ! 'जगन्नाथा' जगस्वामी, जन्म मरण के दुःख हरोगे।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।831।।

आप 'जगद्बंधू' भवि बंधू, भव्यजनों के पूर्ण हितैषी।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।832।।

आप 'जगद्विभु' तीन भुवन में, पालक हो सामर्थ्य समेता।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।833।।

'जगत्' हितैषी तीन जगत में, सर्वजनों को सौख्य दिया है।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।834।।

आप कहे 'लोकज्ञ' जगत् को, जान लिया है पूर्ण तरह से।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।835।।

'सर्वग' तीनों लोक सभी में, व्याप्त हुये ये ज्ञान किरण से।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।836।।

हो 'जगदग्रज' ज्येष्ठ जगत में, सर्व दुखों को दूर करोगे।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।837।।

नाथ! 'चराचरगुरु' कहे हो, स्थावर त्रस के पालक भी हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।838।।

'गोप्य' मुनी रक्खें मन में ही, नाथ! करो रक्षा अब मेरी।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।839।।

हे प्रभु 'गूढ़ात्मा' तुम आत्मा, गोचर इन्द्री के नहिं होती।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।840।।

'गूढ़ सुगोचर' गूढ़ तुम्हीं हो, योगिजनों के गम्य तुम्हीं हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।841।।

हे प्रभु 'सद्योजात' कहे हो, तत्क्षण जन्में रूप रहे हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।842।।

आप 'प्रकाशात्मा' मुनि मानें, ज्ञान सुज्योती रूप बखानें।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।843।।

नाथ! 'ज्वलज्ज्वलनसप्रभ' हो, अग्निप्रभा सी कांति धरे हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।844।।

रविवत् 'आदित्यवरण' स्वामी, हो प्रभु तेजस्वी जग नामी।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।845।।

स्वर्ण छवी 'भर्माभ' कहाये, देह दिपे भास्वत् शरमाये।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।846।।

'सुप्रभ' शोभे कांति तुम्हारी, सूर्य शशी क्रोड़ों लजते हैं।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।847।।

हो 'कनकप्रभ' स्वर्ण प्रभा सी, कांति दिखे उत्तुंग तनु हो।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।848।।

नाथ 'सुवर्णवर्ण' सुर गायें, देह सुवर्णी दीप्ति धराये।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।849।।

आप प्रभो! 'रुक्माभ' कहाये, स्वर्ण छवी सी दीप्ति करो मे।
वंदन करते सौख्य मिलेगा, आतम ज्ञानानंद बढ़ेगा।।850।।

–मंदाक्रांता छंद–

'सूर्यकोटीसमप्रभ' विभो! क्रोड़ सूरज लजाते।
दीप्ती ऐसी तुम तनु विषे आत्मदीप्ती अनोखी।।
वंदूं नामावलि तुम प्रभो! सर्वव्याधी निवारो।
ज्ञानज्योती प्रगटित करो मोहशत्रू भगाके।।851।।

तप्ते सोने सदृश 'तपनीयनिभ' दीप्ती धरे हो।
कर्मों का भी मल सब हटा स्वात्म निर्मल किया है।।वंदूं.।।852।।

ऊँचीदेही धर कर विभो! 'तुंग' माने गये हो।
ऊँचे भावों सहित तुमही मोक्ष प्रासाद पाया।।वंदूं.।।853।।

'बालार्काभो' प्रभु तनु धरा ऊगते सूर्य कांती।
मेरी आत्मा सुवरण करो कर्म पंकील[1]धो दो।।वंदूं. ।।854।।

आत्मा शुद्ध्या 'अनलप्रभ' हो अग्नि कांती सदृश हो।
मेरी आत्मा निरमल करो श्रेष्ठ तप से तपाके।।वंदूं.।।855।।

संध्यालाली सदृश छवि है नाथ!'संध्याभ्रबभ्रू'।
भक्ती लाली शुभ तम रहे नाथ मेरे हृदै में।।वंदूं.।।856।।।

आत्मा निर्मल सुवरण तनू आप 'हेमाभ' मानें।
रागादी को हृदयगृह से दूर कीजे अभी ही।।वंदूं.।।857।।

'तप्तचामीकरप्रभ' तपे स्वर्ण जैसी प्रभा है।
मेरी आत्मा अतिशय धुला कर्म से मुक्त होवे।।वंदूं.।।858।।

शुद्धात्मा हो जिनवृषभ! 'निष्टप्तकनकच्छाय' हो।
कांती धारी अद्भुत महादीप्त त्रैलोक्य स्वामी।।वंदूं.।।859।।

देदीप्यात्मा जिनवर 'कनत्कांचनासन्निभ' देही।
कैवल्यात्मा चमचम करे नाथ! कीजे अबे ही।।वंदूं.।।860।।

मुक्तीकांतावर प्रभु 'हिरण्यवर्ण' इंद्रादि गायें।
दीजे शक्ती निजसम खिले चित्तपंकज सुहाये।।वंदूं.।।861।।

सोने जैसी छवि तुमहिं 'स्वर्णाभ' साधु जनों में।
व्याधी हीना मुझ तनु बने रत्नत्रै साध लूँ मैं।।वंदूं.।।862।।
भव्यों को भी करत शुचि भो! 'शांतकुंभनिभप्रभ' हो।
मेरी आत्मा स्वपर विद हो ज्ञानज्योती जला दो।।वंदूं.।।863।।
सुन्दर सोने सदृश तनु है आप 'द्युम्नाभ' स्वामी।
दीजे सिद्धी निजसुख मिले ना पुनर्भव कभी हो।।वंदूं.।।864।।
जन्मे जैसे विकृति रहिते 'जातरुपाभ' स्वामी।
रागादी मुझ विकृति हरिये दीजिये मुक्ति लक्ष्मी।।वंदूं.।।865।।
'तप्तजाम्बूनदद्युति' प्रभो! श्रेष्ठ स्वर्णिम शरीरी।
दीजे शक्ती द्विदश तपसे आत्म शुद्धी करूँ मैं।।वंदूं.।।866।।
धोये उज्ज्वल कनक से हो पाप क्षालो हमारे।
दीपे आत्मा जिनवर 'सुधौतकलधौतश्री' हो।।वंदूं.।।867।।
दीपे देही जिनरवि 'प्रदीप्त' आप लोकाग्र राजें।
जो भी पूजें सकल दुख भी नाशते सौख्य देते।।वंदूं.।।868।।
स्वामी हो 'हाटकुद्युति' तनू स्वर्ण दीप्ती लजाते।
मैं भी ध्याऊँ हृदय धरके आपको शीश नाऊँ।।वंदूं.।।869।।
स्वामी सौ भी सुरपति जजें आप 'शिष्टेष्ट' मानें।
प्रीती से शिष्ट जन सब तुम्हें इष्ट भगवान् मानें।।वंदूं.।।870।।
पुष्टी कर्ता त्रिभुवन जनों आप 'पुष्टिद' कहे हो।
स्वामिन्! पोषो दुखित मुझको पास आया इसी से।।वंदूं.।।871।।
परमौदारिक तनुधर प्रभो! 'पुष्ट' हो सौख्यभृत हो।
मेरी पुष्टी तुरत करिये रोग शोकादि हरके।।वंदूं.।।872।।
केवलज्ञानी युगपत् तुम्हीं लोक को जानते हो।
कर्मों का मुझ तुरत क्षय हो 'स्पष्ट' स्वामी तुम्हीं से।।वंदूं.।।873।।
वाणी प्रभु की विशद अतिशै 'स्पष्टाक्षर' इसी से।
मेरी वाणी हितकर करो दिव्यवाणी बने भी।।वंदूं.।।874।।

सामर्थ्यात्मा प्रभु 'क्षम' तुम्हीं मोह शत्रू हना है।
शत्रू मृत्यू अति दुख दिया नाथ! नाशो इसे ही।।
वंदूं नामावलि तुम प्रभो! सर्वव्याधी निवारो।
ज्ञानज्योती प्रगटित करो मोहशत्रू भगाके।।875।।

–आर्या छंद–

कर्म शत्रु को मारा, इसीलिये 'शत्रुघ्न' सुरेंद्र कहें।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।876।।
प्रभु 'अप्रतिघ' तुम्हीं हो, शत्रु न कोई रहा यहाँ जग में।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।877।।
प्रभु 'अमोघ' हो नित ही, स्वयं सफल हो किया सफल सबको।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।878।।
नाथ! 'प्रशास्ता' तुम हो, सर्वोत्तम उपदेश दिया तुमने।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।879।।
प्रभो 'शासिता' तुमही, रक्षा करते सदैव भक्तों की।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।880।।
'स्वभू' स्वयं जन्मे हो, मात पिता बस निमित बने सच में।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।881।।
'शांतिनिष्ठ' प्रभु तुमहो, पूर्ण शांति को पाया पाप हना।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।882।।
प्रभु 'मुनिज्येष्ठ' कहाते, गणधर मुनि में बड़े तुम्हीं माने।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।883।।
प्रभु 'शिवताति' जगत में, सब कल्याण परंपरा देते।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।884।।
'शिवप्रद' नाथ तुम्हीं हो, भविजन को सब सुख शिवसुख भी देते।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।885।।

'शांतिद' नाथ सभी को, शांति दिया है सुख भरपूर दिया।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।886।।

नाथ! 'शांतिकृत्' जग में, शांति करो मुझको भी शांति करो।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।887।।

प्रभो! 'शांति' हो जगमें, त्रिभुवन में भी शांति करो भगवन् ।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।888।।

'कांतिमान्' प्रभु मानें, सर्व कांतियुत सभामध्य तेजस्वी।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।889।।

'कामितप्रद' भगवंता, भक्तों के मनरथ पूर्ण किया है।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।890।।

'श्रेयोनिधि' जिनराजा, भविजन के हित तुम सब सुख के दाता।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।891।।

'अधिष्ठान' तुमही हो, त्रिभुवन में दयाधर्म आधारा।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।892।।

'अप्रतिष्ठ' हो भगवन्! परकृत बिना प्रतिष्ठा के पूजित हो।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।893।।

नाथ! 'प्रतिष्ठित' जग में, नर सुरगण में महायशस्वी हो।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।894।।

प्रभु 'सुस्थिर' त्रिभुवन में, अतिशय थिरता मिली तुम्हें निज में।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।895।।

नाथ ! तुम्हीं 'स्थावर' हो, समवसरण में गमन रहित राजें।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।896।।

नाथ! 'स्थाणु' कहाये, अचल रूपधर यहीं विराजे हो।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।897।।

'प्रथीयान्' प्रभु मानें, अतिशय विस्तृत कहें सुरासुर भी।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।898।।

भगवन्! 'प्रथित' तुम्हीं हो, त्रिभुवन में भी प्रसिद्ध अतिशायी।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।899।।

'पृथु' ज्ञानादि गुणों से, गणि मुनिगण में महान हो प्रभुजी।
नाममंत्र मैं वंदूं, पाप हरो शुभ करो स्वामी।।900।।

–शंभु छंद–

प्रभु त्रिकालदर्शी से लेकर, नाम शतक अतिशायी हैं।
गणधर मुनिगण चक्रवर्ति भी, नाम जपें सुखदायी हैं।।
सुरपति खगपति वंदन करते, चरणों में शीश झुकाते हैं।
हम भी वंदे प्रभु शीश नमा, निज समकित गुण पाते हैं।।1।।

।।इति श्रीत्रिकालदर्श्यादिशतम्।।

(10)

–शालिनी छंद–

'दिग्वासा' हो वस्त्र दिश् ही तुम्हारे।
ऐसी मुद्रा हो कभी नाथ मेरी।।
श्रद्धा से मैं नित नमूं नाम मंत्रं।
दीजे शक्ती आत्म संपत्ति पाऊँ।।901।।

स्वामी सुन्दर 'वातरशना' तुम्हीं हो।
धारी वायू करधनी है कटी में।।श्रद्धा.।।902।।

स्वामी 'निर्ग्रंथेश' हो बाह्य अंतः।
चौबीसों ही ग्रन्थ से मुक्त मानें।।श्रद्धा.।।903।।

स्वामी भूमी पे 'दिगम्बर' तुम्हीं हो।
धारा अम्बर दिक्मयी शील पूरे।।श्रद्धा.।।904।।

'निष्किंचन' हो नाथ सर्वस्व त्यागा।
आत्मानंते सद्गुणों से भरी है।।श्रद्धा.।।905।।

इच्छा त्यागी हो 'निराशंस' स्वामी।
आशा मेरी पूरिये सिद्धि पाऊँ।।श्रद्धा.।।906।।

केवलज्ञानी ज्ञान ही नेत्र पाया।
स्वामी मेरे 'ज्ञानचक्षू' तुम्हीं हो।।श्रद्धा.।।907।।
नाशा मोहारी 'अमोमुह' कहाये।
स्वामी मेरे मोह रागादि नाशो।।श्रद्धा.।।908।।
'तेजोराशी' तेज के पुंज स्वामी।
चंदा से भी सौम्य शीतल भये हो।।श्रद्धा.।।909।।
नंते ओजस्वी 'अनंतौज' स्वामी।
मेरी शक्ती को बढ़ा दो सभी ही।।श्रद्धा.।।910।।
हो 'ज्ञानाब्धी' ज्ञान के सिंधु स्वामी।
स्वामी मेरे ज्ञान को पूर्ण कीजे।।श्रद्धा.।।911।।
शीलों से भृत 'शीलसागर' तुम्हीं हो।
अठरा साहस्र शील को पूरिये भी।।श्रद्धा.।।912।।
'तेजोमय' हो नाथ! तेजः स्वरूपी।
आत्मा तेजोरूप मेरी करो भी।।श्रद्धा.।।913।।
'अमितज्योती' आप ज्योती अनंती।
मेरी आत्मा ज्योति से पूर दीजे।।श्रद्धा.।।914।।
'ज्योतिर्मूर्ती' ज्योतिमय देह धारा।
मेरे घट में ज्ञान ज्योती भरीजे।।श्रद्धा.।।915।।
मोहारी हन के 'तमोपह' तुम्हीं हो।
मेरे चित का सर्व अज्ञान नाशो।।श्रद्धा.।।916।।
सकल 'जगच्चूड़ामणी' आप ही हो।
तीनों लोकों के शिखारत्न स्वामी।।श्रद्धा.।।917।।
देदीप्यात्मा 'दीप्त' स्वामी तुम्हीं हो।
मेरी आत्मा दीप्त कीजे गुणों से।।श्रद्धा.।।918।।
'शंवान्' स्वामी सौख्य शांती तुम्हीं में।
मेरी आत्मा सौख्य से पूर्ण कीजे।।श्रद्धा.।।919।।

स्वामी मेरे 'विघ्नवीनायका' हो।
मेरे विघ्नों को हरो नाथ! जल्दी।।
श्रद्धा से मैं नित नमूं नाम मंत्र।
दीजे शक्ती आत्म संपत्ति पाऊँ।।920।।
तीनों लोकों में 'कलिघ्ना' तुम्हीं हो।
मेरे कलिमल नाश के सौख्य दीजे।।श्रद्धा.।।921।।
मेरे स्वामी 'कर्मशत्रुघ्न' ही हो।
दुष्कर्मों को नष्ट कीजे प्रभू जी।।श्रद्धा.।।922।।
हो 'लोकालोक प्रकाशक' जिनेशा।
देखा तीनों लोक अलोक भी तो।।श्रद्धा.।।923।।
जागे आत्मा में 'अनिद्रालु' स्वामी।
मेरी आत्म मोह निद्रा तजे भी।।श्रद्धा.।।924।।
आलस नाशा हो 'अतन्द्रालु' स्वामी।
मेरी आत्मा ज्ञान से स्वस्थ होवे।।श्रद्धा.।।925।।

–लोलतरंग छंद–

जाग्रत संतत 'जागरूक' हो।
मोह कि नींद हरो तुम ध्याऊँ।।
नाम सुमंत्र जपूं मन लाके।
आत्म सुधारस पान करूँ मैं।।926।।
नाथ! 'प्रमामय' ज्ञानमयी हो।
ज्ञान गुणाधिक हो मुझ आत्मा।।नाम.।।927।।
स्वामिन्! 'लक्ष्मीपति' जग में हो।
नंत चतुष्टय श्रीपति जिन हो।।नाम.।।928।।
नाथ! 'जगज्ज्योती' कहलाये।
ज्योति भरो तम को हर लीजे।।नाम.।।929।।
धर्म दयापति 'धर्मराज' हो।
नाथ हृदे मुझ धर्म विराजे।।नाम.।।930।।

नाथ! 'प्रजाहित' सर्व प्रजा की।
पालन रीति नृपाल सिखायी।।
नाम सुमंत्र जपूँ मन लाके।
आत्म सुधारस पान करूँ मैं।।931।।

नाथ! 'मुमुक्षु' कहें मुनि ज्ञानी।
इच्छुक कर्म अरी सब छूटें।।नाम.।।932।।

'बंधमोक्षज्ञा' हो तुम स्वामी।
जानत बंध रु मोक्ष विधी को।।नाम.।।933।।

नाथ! 'जिताक्ष' जिता पण इंद्री।
जीत सकें विषयों को हम भी।।नाम.।।934।।

हो 'जितमन्मथ' काम विजेता।
काम अरी मुझ मार भगावो।।नाम.।।935।।

नाथ! 'प्रशांतरसशैलुष' हो।
किया प्रदर्शन शांतिरसों का।।नाम.।।936।।

'भव्यनपेटकनायक' मानें।
भव्य समूह कहें तुम स्वामी।।नाम.।।937।।

धर्म प्रधान कहा युग आदी।
'मूलसुकर्ता' आप बखाने।।नाम.।।938।।

सर्व पदारथ पूर्ण प्रकाशा।
नाथ! 'अखिलज्योती' सुर गाते।।नाम.।।939।।

नाथ! 'मलघ्न' सभी मल हाने।
सर्व अघों मल नाश करो मे।।नाम.।।940।।

'मूलसुकारण' मुक्ति सुपथ के।
नाथ! मुझे शिवमार्ग दिखा दो।।नाम.।।941।।

'आप्त' यथारथ देव तुम्हीं हो।
नाथ! तपोनिधि दो सुखदाता।।नाम.।।942।।

हो 'वागीश्वर' दिव्यधुनी के।
लोल तरंग वचोऽमृत गंगा।।
नाम सुमंत्र जपूँ मन लाके।
आत्म सुधारस पान करूँ मैं।।943।।

हो 'श्रेयान्' प्रभो! श्रिय दाता।
अंतर बाहिर श्री मुझको दो।।नाम.।।944।।

'श्रायसउक्ति' हितंकर वाणी।
नाथ! मुझे निज रत्नत्रयी दो।।नाम.।।945।।

सार्थकवाच 'निरुक्तवाक्' हो।
आप धुनी मन शांति करेगी।।नाम.।।946।।

नाथ! 'प्रवक्ता' श्रेष्ठ वचों से।
धर्मसुधा बरसा जन तोषा।।नाम.।।947।।

नाथ! तुम्हीं 'वचसामिश' मानें।
धर्म वचन के ईश्वर ही हो।।नाम.।।948।।

'मारजीता' प्रभु कामजयी हो।
सर्व मनोरथ पूर्ण करो जी।।नाम.।।949।।

'विश्वभाववित्' तीन जगत् को।
जान लिया मुझ ज्ञान सुधा दो।।नाम.।।950।।

–त्रिभंगी छंद–

हे नाथ 'सुतनु' हो, उत्तमतनु हो, अतिशय दीप्ती, धारत हो।
हन आधी व्याधी, मेट उपाधी, पूर्ण निरामय कारक हो।।
प्रभु नाममंत्र तुम, अतिशय उत्तम, जो जन वंदें भक्ति करें।
सब आपद टालें, संपति पालें, निज आतम में तृप्ति धरें।।951।।

प्रभु देहरहित हो, ज्ञानदेह हो, 'तनुनिर्मुक्त' कहाते हो।
तनु बंधन काटूं, अघ अरि पाटूं, भवितनुमल, को नाशे हो।।प्रभु.।।952।।

प्रभु 'सुगत' तुम्हीं हो, अधर गमन हो, आत्मरूप में लीन रहे।
मुझ सुगति करोगे, सौख्य भरोगे, दो शक्ती शिवमार्ग लहें।।प्रभु.।।953।।

प्रभु'हतदुर्नय' हो, स्वयं सुनय हो, मिथ्यानय को दूर किया।
जो नहिं निरपेक्षी, नित सापेक्षी,सम्यकनय का कथन किया।।
प्रभु नाममंत्र तुम, अतिशय उत्तम, जो जन वंदें भक्ति करें।
सब आपद टालें, संपति पालें, निज आतम में तृप्ति धरें।।954।।

प्रभु तुम्हीं 'श्रीश' हो, मुक्ति ईश हो, अंतर बाहिर लक्ष्मी से।
श्री आदि देवियां, मात सेविया, तुम महिमा सुर भक्ती से।।
प्रभु.।।955।।

श्री-लक्ष्मी सेवित, चरणकमलयुग, प्रभु 'श्रीश्रितपादाब्ज' तुम्हीं।
धन लक्ष्मी इच्छुक, भविजन वंदत, सभी सौख्य श्री देत तुम्हीं।।
प्रभु.।।956।।

प्रभु आप 'वीतभी', प्राप्त अभयधी, भविजन को निर्भीक करो।
हत जन्म मरण भय, शिवपद निर्भय, देकर मुझभय शीघ्र हरो।।
प्रभु. ।।957।।

भगवन 'अभयंकर' जग क्षेमंकर, भव्य हितंकर आप कहे।
मेरे दुख टारो, भव निरवारो, मुझ आत्मा निज सौख्य लहे।।
प्रभु. ।।958।।

'उत्सन्नदोष' हो, रत्नकोश हो, सब दोषों को दूर किया।
मुझ दोष दूर हों, सौख्य पूर हो, इस आशा से शरण लिया।।
प्रभु.।।959।।

सब विघ्न विरहिते, मंगल सहिते, कर्म हते, निर्विघ्न भये।
मुझ शिवमारग में, दिन प्रतिदिन में, विघन घने, तुम नमत गये।।
प्रभु.।।960।।

प्रभु अतिशय सुस्थिर, ज्ञान चराचर, मुनिगण 'निश्चल' तुमहिं कहें।
मुझ चित्त विमल हो, ध्यान अचल हो, पद भी निश्चल, शीघ्र लहें।।
प्रभु.।।961।।

प्रभु तुमपद प्रीती, सुद्गुण नीती, हरत अनीती, प्रेम भरे।
तुम 'लोकसुवत्सल', हरत करममल, भरत महाबल, नेह धरें।।
प्रभु.।।962।।

प्रभु तुम 'लोकोत्तर', सर्व अनुत्तर, नमत सुरासुर, भविक भजें।
जो तुमपद ध्यावें, निज सुख पावें, कर्म नशावें, सुगुण सजें।।
प्रभु नाममंत्र तुम, अतिशय उत्तम, जो जन वंदें भक्ति करें।
सब आपद टालें, संपति पालें, निज आतम में तृप्ति धरें।।963।।

प्रभु 'लोकपती' हो, त्रिजग अधिप हो, भवि रक्षक हो, त्रिभुवन में।
अतिशय सुखदाता, हरत असाता, मोक्ष विधाता, मुनिगण में।।
प्रभु.।।964।।

प्रभु भविक नयन हो, 'लोकचक्षु' हो, जगत लखत हो, प्रतिक्षण में।
मुझ ज्ञाननेत्र दो, भ्रम तमहर दो, निज रुचि भर दो, रग रग में।।
प्रभु.।।965।।

प्रभु तुम 'अपारधी', अनवधिबुद्धी, हरत कुबुद्धी, ज्ञानमयी।
मुझ कुमति हटा दो, सुमति बढ़ा दो, मोह मिटा दो, दुःखमयी।।
प्रभु.।।966।।

प्रभु आप 'धीरधी' सुस्थिर बुद्धी, अतुलित बुद्धी, महामना।
मुझ ज्ञान विमल हो, सौख्य अमल हो, जन्म सफल हो, धर्मघना।।
प्रभु.।।967।।

प्रभु भवदधि पारग, भवि शिवमारग, आप 'बुद्धसन्मार्ग' कहे।
पथ स्वयं चले हो, कहत भले हो, तुमसे ही, जन मार्ग लहें।।
प्रभु.।।968।।

प्रभु आप 'शुद्ध' हो, स्वात्मसिद्ध हो, भविजन शुद्ध, बने तुमसे।
मुझ कलिमल नाशो, आत्म प्रकाशो, मन में भासो, नमुं रुचि से।।
प्रभु.।।969।।

प्रभु सत्यपवित्रा, वचन धरित्रा, 'सत्यासूनृतवाक्' तुम्हीं।
तुम वचन औषधी, सर्व औषधी, मेटत जामन मरण मही।।
प्रभु.।।970।।

प्रभु चरमसीम पे, बुद्धी पहुँचे, 'प्रज्ञापारमिता' तुम हो।
मुझ ज्ञान अल्पश्रुत, बने पूर्ण श्रुत, ज्ञान ध्यान शिव कारक हो।।
प्रभु.।।971।।

प्रभु 'प्राज्ञ' कहाये, मोह नशाये, सुरगण गायें, गुण नित ही।
मुझ विद्यादाता, दो सुखसाता, हरो असाता, हो सुख ही।।
प्रभु.।।972।।
प्रभु विषय विरत हो, स्वात्म निरत हो, महाव्रतिक हो, 'यति' तुमही।
इंद्रिय विषयन को, कषाय गण को, दूर करो जो, दुखद मही।।
प्रभु.।।973।।
प्रभु!'नियमित इंद्रिय' जित पण इंद्रिय, जीत लिया हिय, जिन तुमही।
मुझ इंद्रिय मन की, जीतन शक्ती, दीजे युक्ती, नमित मही।।
प्रभु.।।974।।
भगवन् ! 'भदंत' तुम, पूज्य कहें मुनि, सुरनर यतिगण, तुम वंदे।
हम तज बहिरात्मा, अंतर आत्मा, हों परमात्मा गुण मंडे।।
प्रभु.।।975।।

–पृथ्वी छंद–

प्रभो! तुमहिं 'भद्रकृत्' सकल लोक कल्याणकृत्।
नमूँ अतुल भक्ति से त्वरित सौख्य दीजे मुझे।।
नमूँ सतत नाम मंत्र दुख शोक दारिद्र नशे।
मिले निकल आतमा सकल ज्ञानज्योती जगे।।976।।
प्रभो! तुमहिं 'भद्र' हो सकल जीव श्रेयस् करो।
अमंगल हरो सदा अखिल विश्व मंगल करो।।नमूँ.।।977।।
प्रभो! तुमहिं 'कल्पवृक्ष' मन चाहि वांछा भरो।
अतः सकल भव्यजीव नित भक्ति से वंदते।।नमूँ.।।978।।
'वरप्रद' जिनेशा एक वरदान दे दीजियें
मिले तुरत सिद्धिधाम बस और ना चाहिये।।नमूँ.।।979।।
जिनेश! यम नाशके 'समुन्मूलिता कर्मारि' हो।
उखाड़ जड़मूल से करम शत्रु नाशा तुम्हीं।।नमूँ.।।980।।
जिनेन्द्र! तुम 'कर्मकाष्ठाशुशुक्षणी' लोक में।
समस्त अठ कर्म इंधन जलावते अग्नि हो।।नमूँ.।।981।।

समस्त शिव कार्य में निपुण आप 'कर्मण्य' हो।
प्रभो! निमित्त आप पाय सब कार्य मेरे बनें।।
नमूँ सतत नाम मंत्र दुख शोक दारिद्र नशे।
मिले निकल आतमा सकल ज्ञानज्योती जगे।।982।।
समस्त कर्मारि के हनन में सुसामर्थ्य है।
अतेव 'कर्मठ' तुम्हीं सकल कार्य में दक्ष हो।।नमूँ.।।983।।
समर्थ प्रभु आप ही सतत 'प्रांशु' सर्वोच्च भी।
समस्त अघ नाश के सकल सौख्य संपद् भरो।।नमूँ.।।984।।
जिनेश! बस आप 'हेयआदेयवीचक्षणः'।
हिताहित विचारशील तुम सा नहीं अन्य है।।नमूँ.।।985।।
समस्त जग जानते प्रभु 'अनंतशक्ती' तुम्हीं।
अनंत गुण पूरिये हृदय में सदा राजिये।।नमूँ.।।986।।
न छिन्न भिन्न हों कभी प्रभु सदैव 'अच्छेद्य' हो।
मुझे स्वपर ज्ञान हो स्वयम् ही स्वयंभू बनूँ।।नमूँ.।।987।।
जिनेन्द्र! 'त्रिपुरारि' हो त्रिविध कर्म को नाशके।
जरा जनम मृत्यु तीन पुर नाश कीने तुम्हीं।।नमूँ.।।988।।
'त्रिलोचन' त्रिकालवर्ति सब वस्तु को देखते।
जिनेन्द्र! श्रुतज्ञान से विमल स्वात्म चिंतन करूँ।।नमूँ.।।989।।
'त्रिनेत्र' तुम जन्म से मति श्रुतावधी ज्ञानि थे।
पुनः त्रिजग देख के सकल ज्ञानधारी भये।।नमूँ.।।990।।
त्रिलोक पितु आप 'त्र्यंबक' कहें मुनीनाथ भी।
मुझे भी प्रभु पालिये निजगुणादि से पूरिये।।नमूँ.।।991।।
जिनेन्द्र! 'त्र्यक्ष' हो सतत रत्नत्रैरूप हो।
मुझे भि त्रय रत्न दो सकल लोक स्वामी बनूँ।।नमूँ.।।992।।
स्वघाति चउ नाश 'केवलसुज्ञानवीक्षण' बनें।
विघात घन घाति मैं सकल ज्ञान पाऊँ प्रभो।।नमूँ.।।993।।

प्रभो! तुम 'समंतभद्र' सब ओर मंगलमयी।
अमंगल हरो सभी भुवन में सुमंगल करो।।नमूँ.।।।994।।
प्रभो! सकल शत्रु शांतकर आप 'शांतारि' हो।
मुझे करम शत्रु शांतकर शक्ति दे दीजिये।।नमूँ.।।995।।
सुधर्म संस्थाप के तुमहि, 'धर्म आचार्य' हो।
प्रभो सकल विश्व में सदय[1] धर्मनेता तुम्हीं।।नमूँ.।।996।।
'दयानिधि' तुम्हीं सभी जन दया के भंडार हो।
दयालु मुझपे दया अब करो दुखी जान के।।नमूँ.।।997।।
पदार्थ सब सूक्ष्म भी लखत 'सूक्ष्मदर्शी' प्रभों
मुझे अतुल शक्ति दो सकल लोक अलोक[2] लूँ।।नमूँ.।।998।।
स्वकाम अरि-जीत के प्रभु तुम्हीं 'जितानंग' हो।
अभीप्सित सुपूरिये विषय काम को नाश के।।नमूँ.।।999।।
'कृपालु' करके कृपा सकल पाप को नाशिये।
अनंत सुख दीजिये भुवन शीश पे थापिये।।नमूँ.।।1000।।
जिनेन्द्र! भुवि 'धर्मदेशक' तुम्हीं सुधर्माब्धि हो।
मुझे स्वपर भेदज्ञानमय धर्म दीजे अबे।।नमूँ.।।1001।।
'शुभंयु' शुभ युक्त हो प्रभु सुखामृताम्भोधि हो।
मुझे शुभमयी करो तुरत शुद्ध आत्मा बने।।नमूँ.।।1002।।
जिनेन्द्र! 'सुखसाद्भूत' अनुपं सुखाधीन हो।
अनंत सुख दो मुझे गुणसमूह से पूर्ण जो।।नमूँ.।।1003।।
जिनेश! तुम 'पुण्यराशि' शुभ पुण्य भंडार हो।
पवित्र निज को किया मुझ पवित्र आत्मा करो।।नमूँ.।।1004।।
'अनामय' प्रभो! तुम्हें सकल व्याधि पीड़ा नहीं।
समस्त तनु रोग नाश भव व्याधि मेरी हरो।।नमूँ.।।1005।।
जिनेन्द्र! तुम 'धर्मपाल' जिन धर्म को रक्षते।
अनंत जिनधर्म हे हृदय में विराजो सदा।।नमूँ.।।1006।।

1. दया सहित। 2. देख लूं।

प्रभो! 'जगत्पाल' हो भुवन प्राणि को रक्षते।
मुझे सतत रक्षिये जगपते! मनोरक्ष हो।।
नमूँ सतत नाम मंत्र दुख शोक दारिद्र नशे।
मिले निकल आतमा सकल ज्ञानज्योती जगे।।1007।।
जिनेन्द्र! जगमध्य 'धर्मसाम्राज्यनायक' तुम्हीं।
सुमोक्षप्रद सार्वभौम जिनधर्म के ईश हो।।नमूँ.।।1008।।

–शंभु छंद–

दिग्वासादिक नाम एक सौ, आठ आपके सुरपति गाते।
नाममंत्र को मन में ध्याकर, योगीजन निज संपति पाते।।
मैं भी प्रतिक्षण नाममंत्र को, हृदय कमल में धारण कर लूँ।
प्रभु ऐसी दो शक्ती मुझको, तुम भक्ती से भवदधि तर लूँ।।1।।

।।इति श्रीदिग्वासादिशतम्।।

जिन सहस्रनाम स्तोत्र महिमा

–दोहा–

महातेज के धाम प्रभु, नमूँ नमूँ त्रयकाल।
एक हजार सुआठ तुम, नाममंत्र गुणमाल।।1।।

चाल-शेर, हे दीनबंधु.....

जय जय जिनेन्द्र! तुम असंख्य नाम गुण भरें।
जय जय जिनेन्द्र! तुम अनंत सौख्य गुण भरें।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।2।।
हे नाथ! यदपि आप नाम वचन से कहें।
फिर भी वचन अगोचर मुनिगण तुम्हें कहें।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।3।।

तुम नाम संस्तवन सदा अभीष्ट को फले
भगवन्! तुम्हीं तो भक्तों के बंधु हो भले।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।4।।

स्वाामिन्! जगत्प्रकाशी हो 'एक' ही तुम्हीं।
हो ज्ञानदर्श गुण से 'दोरूप' भी तुम्हीं।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।5।।

रत्नत्रयी शिवमार्ग से प्रभु 'तीनरूप' हो।
आनन्त्य चतुष्टय से प्रभु 'चाररूप' हो।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।6।।

हो पंच परमेष्ठी स्वरूप 'पाँचरूप' भी।
प्रभु पंच कल्याणक से भी 'पाँचरूप' ही।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।7।।

जीवादि छहों द्रव्य जानते 'छहरूप' हो।
प्रभु सात नयों का निरूप 'सातरूप' हो।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।8।।

सम्यक्त्व आदि आठ गुण से 'आठरूप' हो।
नव केवली लब्धी से आप 'नवस्वरूप' हो।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।9।।

अवतार दश[1] महाबलादि 'दशस्वरूप' हो।
हे ईश! दया कीजिये त्रैलोक्य भूप हो।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।10।।

1. भगवान आदिनाथ के महाबल।

मैं आप विविध नाम पुष्प गूँथ गूँथ के।
स्तोत्र की माला बनाई पूजहूँ उससे।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।11।।

भगवन्! प्रसन्न होय अनुग्रह करो मुझपे।
स्तोत्र से वच हों पवित्र शीश नमें से।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।12।।

प्रभु नाम स्मृतिमात्र से भाक्तिक पवित्र हों।
जो भक्ति से पूजा करें कल्याण पात्र हों।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।13।।

इस विध समवसरण में इंद्र ने स्तुति किया।
फिर श्री विहार हेतु प्रभु से प्रार्थना किया।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।14।।

हे नाथ! भव्य धान्य पाप अनावृष्टि से।
सूखें उन्हें सीचों सुधर्म सुधावृष्टि से।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।15।।

भगवंत! आप विजय की उद्योग सूचना।
ये धर्मचक्र है तैयार शोभता घना।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।16।।

हे देव! आप मोह शत्रु पे विजय किया।
शिवमार्ग के उपदेश का अवसर ये आ गया।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।17।।

जिनवर स्वयं तैयार श्री विहार के लिये।
बस इंद्र की ये प्रार्थना नियोग के लिये।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।18।।

तत्क्षण समवसरण तभी विलीन हो गया।
इंद्रों ने प्रभु विहार का उत्सव महा किया।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।19।।

जय जय ध्वनी ऊँची उठी बाजें बजे घने।
संगीत गीत नृत्य करें देवगण घने।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।20।।

आकाश में अधर सुवर्ण कमल रच दिये।
सुरभित कमल पे नाथ चरण धरत चल दिये।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।21।।

गंधोद वृष्टि, पुष्पवृष्टि मंद पवन है।
अतिशय विभूति आपके विहार समय है।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।22।।

आरे हजार धर्म चक्र चमचमा रहा।
जिनराज आगे-आगे चले शोभता महा।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।23।।

हे देव! मेरी प्रार्थना को पूर्ण कीजिये।
'कैवल्यज्ञानमती' नाथ! तूर्ण[1] दीजिये।।
हे नाथ! तुम सहस्रनाम नित्य जो पढ़ें।
वे हों पवित्र बुद्धि मोक्ष महल में चढ़ें।।24।।

1. शीघ्र।

–दोहा–

श्री जिनसेनाचार्यकृत, यह स्तोत्र महान्।
सहस्रनाम स्तोत्र यह, संस्कृत रचना जान।।25।।
टीका ग्रन्थाधार से, किया अर्थ अन्वर्थ।
गणिनी ज्ञानमती रचित पद्य फलें इष्टार्थ।।26।।
स्मृति वृद्धि हेतु नित, पढ़ो पढ़ावो भव्य।
निज श्रुतज्ञान प्रपूर्णकर, पावो निजपद नव्य।।27।।

प्रशस्ति

चौबीसौं जिनवर नमूं, नमूं ऋषभ जिनदेव।
श्री गौतम गणधर नमूं, करूं सरस्वती सेव।।1।।

कुंदकुंद आम्नाय में, गच्छ सरस्वति मान्य।
बलात्कारगण ख्यात में, हुये सूरि जग मान्य।।2।।

इस युग के चूड़ामणी, शांतिसागराचार्य।
चारित चक्री धर्मधुरि, हुये प्रथम आचार्य।।3।।

इनके पट्टाधीश थे, वीरसागराचार्य।
मुझे आर्यिका व्रत दिया, नाम ज्ञानमति धार्य।।4।।

सहस्रनाम स्तोत्र यह, रचा स्वहित श्रुतसार।
स्मृति शक्ती वृद्धि हित, पढ़ो भव्य सुखकार।।5।।

सब श्रुतज्ञान प्रपूर्ण कर, पाओ सौख्य निधान।
ज्ञानमती कैवल्य हो, मिले निजात्मस्थान।।6।।

जब तक श्रीजिनधर्म यह, जग में करे प्रकाश।
तब तक गणिनी ज्ञानमति, कृत स्तोत्र सुखराशि।।7।।